मज़हब ए अहले सुन्नत यानी
मस्लके आला हज़रत का बेबाक तर्जुमान

सितम्बर-अक्तूबर 2014
जिल्द न. : 1, शुमारा : 4

हुज्जतुल इस्लाम बनामे

: ऐडिटर :
सैय्यद मुहम्मद अज़ीज़ुल्लाह हुसैनी ताहिर अशरफ़ी

: कमपोज़र :
मुहम्मद सलाहउद्दीन वास्ती

मस्लके आला हज़रत अकाबिरीने अहले सुन्नत की नज़र में

* मेरा मस्लक शरीअत व तरीकत में वही है जो आला हज़रत मौलाना शाह अहमद रज़ा बरेलवी रहमतुल्लाह अलैह का है।
(सैय्यद शाह अली हुसैन अशरफ़ी मियां)
* दीने इस्लाम व मज़हबे इस्लाम का सच्चा खुलासा मस्लके आला हज़रत है।
(शेरे बेशाए अहले सुन्नत मौलाना मुफ्ती हशमत अली खान)
* मैं मस्लके अहले सुन्नत पर ज़िन्दा रहा और मस्लके अहले सुन्नत वही है जो मस्लके आला हज़रत है।
(मुबल्लिगे इस्लाम मौलाना अब्दुल अलीम मेरठी)
* इस में शक नहीं कि आला हज़रत का मस्लक बिल्कुल हक है और जो उनके तरीके पर है वही ठीक है।
(मलेकुल उलमा मुफ्ती ज़फरुद्दीन बिहारी)
* फकीर का और फकीर के आबाओ अजदाद का वही मस्लक है जो मस्लके आला हज़रत कुद्दसिर्रहु का है।
(अल-बरकात मौलाना मुफ्ती सैय्यद अहमद कादरी)
* आला हज़रत के मस्लक व तहकीकात में किस का ज़ेहरा है जो जुरात लब कुशाई कर सके।
(मुफ्तीए आज़म दहली मौलाना मज़हरुउल्लाह नक्शबंदी)
* वो मेरा मुरीद नहीं जो मस्लके आला हज़रत के खिलाफ है।
(मौलाना मुफ्ती अहमद सईद काज़मी)
* मेरा जो मुरीद मस्लके आला हज़रत से ज़रा भी हट जाए तो मैं उसकी बैत से बेज़ार हूं।
(एहसनुल उलमा मौलाना मुफ्ती सैय्यद शाह मुस्तफा हैदर हसन)

प्रिंटर, पबलीशर, प्रोपराईटर मौलाना सैय्यद मुहम्मद हुसैनी अशरफ़ी मिस्बाही ने शम्सिया प्रिंटिंग प्रेस, गांजाखेत, नागपूर से छपवा कर दफ्तर ''माहनामा सुन्नी आवाज़'', मुहल्ला गांजाखेत, नागपूर से शाए किया।
e_mail : mail@sunniawaz.com Contact No. : 09561080392

फ़हरिस्त

मर्कज़े अहलेसून्नत

अज़ः मौलाना सय्यद मौहम्मद हूसेनि अशराफि, मिसबाही, चिफ एडिठर माहनामा सून्नी आवाज़ नागपूर

मेरे सामने माह जुलाई 2014 का मुबारकपूर से शाए होने वाला रिसाला ''माहनामा अशरफ़िया'' है। मुझे कभी कभी यह रिसाला देखने को मिलता है। इदारिया जो स. 3 से शुरू होकर स. 7 पर ख़त्म हुआ है। उस में जनाबे मुदीर ने इसी पर ज़ोर दिया है कि, बरेली अब मरकज़ नहीं बल्कि अशरफ़िया मुबारकपूर है। चुनांचे पहले उन्होंने ख़लीफ़ा व शागिर्दे आ़ला हज़रत हुज़ूर बुरहाने मिल्लत जबलपूरी अलैहिर्रहमा की एक इबारत का हवाला दिया है। पहले आप जनाबे मुदीर साहब के तमहीदी कलमात मुलाहिज़ा फ़रमाएं, वो लिखते हैं, ''**बअ़ज़ बातें कभी-कभी बड़ी एहमियत की हामिल होती हैं, आज हमें याद आगए ख़लीफ़ए आ़ला हज़रत मुफ़्तीए आ़ज़म, एम.पी., बुरहाने मिल्लत हज़रत अ़ल्लामा मुहम्मद बुरहानुलहक़ क़ादरी अलैहिर्रहमा। आपने हाफ़िज़े मिल्लत के लिए एक गिरांकद्र तहरीर इरसाल फ़रमाई थी। अ़ज़ीज़ुल उलमा, नबीलुलफ़ुज़ला, हाफ़िज़े मिल्लत रहमतुल्लाह अ़लैह की यादगार और उनके ज़िक्रे ख़ैर के हामिल इल्मी और अ़मलीशाहकार। अव्वलन तो उनके शागिर्द और तलामज़ा हैं, जिनके ज़हन और क़ुलूब ज़ाहिर और बातिन हाफ़िज़े मिल्लत की तालीमात और उनके इरशादात और हिदायात का मज़हर हैं। दूसरा वो मरकज़े इल्म, मअ़दने इल्म, मंबए इल्म है जो ख़ूबसूरत इमारते अ़ज़ीमा दारूलउलूम अशरफ़िया (जामेआ़ अशरफ़िया, मुबारकपूर) क़ायम है। जिसे हाल के मुहावरे में यूनिवर्सिटी कहा जाता है।**'' (माहनामा अशरफ़िया, मुबारक. पूर–माह जुलाई 2014, स. 3)

हुज़ूर बुरहाने मिल्लत अलैहिर्रहमा का हुज़ूर हाफ़िज़े मिल्लत अलैहिर्रहमा की ख़िदमत में बेहतरीन अलफ़ाज़ में बेहतरीन ख़िराजे अ़क़ीदत है जो हक़ीक़त पर मुशतमिल है। हवाला पेश करने में यहां जनाबे मुदीर का असल मक़्सद हज़रत बुरहाने मिल्लत अलैहिर्रहमा की गिरांक़द्र तहरीर में हज़रतेवाला के चन्द अलफ़ाज़ ''**मरकज़े इल्म, मअ़दने इल्म, मुंबए इल्म**'' ही से बहस मक़्सूद है। ख़ासकर मरकज़े इल्म से, जो उन्होंने समझा है कि, बरेली के मुक़ाबिल मरकज़े अशरफ़िया, मुबारकपूर है। इसी पर उन्होंने ज़ोर दिया है। आगे चल कर उन्होंने हज़रत मौलाना मुफ़्ती मतीउर्रहमान साहब मज़तर की तहरीर का हवाला देकर दोनों ने नाकाम कोशिश की है कि, ''**बरेली, आ़ला हज़रत और मुफ़्तीए आ़ज़मे हिन्द रहमतुल्लाह अलैहमा के ज़मानए हयात में मरकज़ था। अब हज़रत ताजुश्शरिआ़ अ़ल्लामा अख़्तर रज़ा खान साहब क़ादरी अज़हरी मद्दज़िल्लाहुलआ़ली के ज़माने में मरकज़ नहीं है।**''

बरीं अ़क़्ल व दानिश बबायद गरीस्त

हैरत और अफ़सोस तो जनाब मज़तर साहब के तहरीर पर है। उनकी ख़िदमत में एकशेर नज़र

करना मुनासिब समझता हूं ....

वहशत में हर एक नक़्शा उलटा नज़र आता है
मजनूं नज़र आती है लैला नज़र आता है

जनाब मज़तर ने बिला वजह हज़रत ताजुश्शरिआ से बुग्ज़ व अ़दावत इख़्तेयार की। इसी बुग्ज़ व अ़दावत की वजह से बरेलीशरीफ़ के मरकज़ होने का इंकार कर बैठे और अशरफ़िया मुबारकपूर में बुग्ज़ की चिंगारी दिल में रखने वालों को हवा मिल गई। वो चिंगारीशोला ज्वाला बन गई। मुलाहिज़ा फ़रमाईए जनाब मज़तर की बदहवासी के आ़लम में उन तहरीर का कुछ हिस्सा, जिसको ''माहनामा अशरफ़िया मुबारकपूर'' नेशाए किया, जिसका हवाला गुज़र रहा है। ''**आख़िरी हिस्सा और ख़ूसूसी ख़िताब'' मनाज़िरे अहलेसुन्नत, ख़लीफ़ए मुफ़्तीए आ़ज़मे हिन्द हज़रत अ़ल्लामा मुफ़्ती मतीउर्रहमान मज़तर ने अपने ख़िताब में फ़रमाया, ''हज़रात! पहली बात तो यह याद रखिए कि मैं मिस्बाही नहीं हूं। मेरा अशरफ़िया से कोई ऐसा रिशता नहीं है, जिसकी बुनियाद पर यह कहा जा सके कि, मैं इस का वफ़ादार हूं या ग़द्दार हूं। मुझे किसी ऐसे रिशते से ना वफ़ादार कहा जा सकता है ना ग़द्दार कहा जा सकता है। उसूलन ना मैं मंज़री हूं, ना मज़हरी। मैं सिर्फ़ और सिर्फ़ नूरी हूं। यानी मैं हुज़ूर मुफ़्तीए आ़ज़मे हिन्द अलैहिर्रहमा से निस्बत रखता हूं। मैं ख़ालिस अजनबी और न्यूट्रल हूं, इसके बावजूद मैं यह कहने पर मजबूर हूं कि, आज الحمدلله जामेआ़ अशरफ़िया ही हमारी सुन्नियत की आबरू है।**'' (माहनामा अशरफ़िया, मुबारकपूर–माह जुलाई २०१४, स.५)

जनाबे मज़तर! हमेशा हर इदारा और जमाअ़त में अपने आपको ख़ालिस अजनबी और न्यूट्रल समझने वालों ही से ख़तरात दरपेश रहे हैं और आप भी अपने आपको अजनबी और न्यूट्रल समझ रहे हैं? जब आपने अपने आपको अजनबी समझ ही लिया तो आप से ऐसे ही हरकात सरज़द होंगी।

जनाबे मज़तर! बड़े अफ़सोस की बात है कि, आपने अपने को यह समझ लिया कि, ''ना मैं मंज़री हूं और ना मज़हरी।'' फिर आपने कहां से इल्मी फ़ैज़ान पाया? क्या यूंही आसमान से इल्म का इल्क़ा हुआ था? अगर ऐसी बात है तो आप को इल्क़ाई कहना चाहिए। क्योंकि आप बरेली के ख़िलाफ़ जोशे हसद में अपने आपको मंज़री और मज़हरी होने से भी इंकार कर बैठे। जनाबे मज़तर को मंज़री या मज़हरी कहने मेंशर्म क्यों महसूस हो रही है? जबकि मेरे उस्ताज़े मुकर्रम हज़रत हाफ़िज़े मिल्लत भी, जो असल में मिस्बाही नहीं थे, वो सिर्फ़ और सिर्फ़ मंज़री थे। इस नाते से हुज़ूर हाफ़िज़े मिल्लत अलैहिर्रहमा को मंज़री कहा जा सकता है। आप इससे क्यों कतरा रहे हैं? किसी ना किसी से इल्मी फ़ैज़ान पाने का सिलसिला होगा, उसको आप छुपा रहे हैं? अब रहा नूरी होने का मआ़मला, यह निस्बत सिलसिलए बैत से तअ़ल्लुक़ रखने वाली है। हुज़ूर मुफ़्तीए आ़ज़मे हिन्द अलैहिर्रहमा से बैत हासिल करने की वजह से अपने आपको नूरी लिखते हैं, यह अलग निस्बत है। मंज़री और मज़हरी होने की निस्बत तालीम पाने और इल्मी फ़ैज़ान हासिल करने की वजह से कहा जाता है। अफ़्सोस! आप इस का इंकार कर बैठे। यह इंकार हज़रत अज़हरी साहब बरेलवी मद्दज़िल्लाहुलआ़ली से जोशे हसद व अ़दावत में है। जनाबे मुदीर अशरफ़िया ने इसी को उभारा। कहीं आप

इल्मी दुनिया में बेविक़्अ़त तो नहीं होंगे? आपने कुछ सोचा नहीं? आगे जनाब मज़तर कहते हैं, ''**आज के माहौल में, आज की दुनिया में बिलाशुबह बरेलीशरीफ़ हमारा मरकज़ है। मगर आज के माहौल में मरकज़ का मानी आ़ला हज़रत से मुफ़्तीए आ़ज़मे हिन्द तक है।**''

चन्द सतर बाद जनाब बड़ी बेबाकी से कहते हैं, ''**सुनियए! मरकज़ नाम है आ़ला हज़रत से ले कर मुफ़्तीए आ़ज़मे हिन्द तक का और आज यहां सब से बड़ीशख़्सियत इल्मी, रूहानी हर ऐतेबार से हज़रत अज़हरी मियां साहब क़िबला है।**'' (माहनामा अशरफ़िया, मुबारकपूर–माह जुलाई २०१४, स.५)

जनाब मज़तर ने अपनी इज़्तेराबी कैफ़ियत में कह दिया कि, ''मरकज़ का मानी आ़ला हज़रत से मुफ़्तीए आ़ज़मे हिन्द तक है।'' जनाब मज़तर ने मरकज़ का मानी समझा ही नहीं। बुग्ज़े हज़हरी मियां में यहां तक बरेली के मरकज़ होने को तस्लीम कर लिया। हुजूर मुफ़्तीए आ़ज़मे हिन्द अलैहिर्रहमा के बाद दौरे अज़हरी से बरेली के मरकज़ होने का इंकार कर दिया। जनाब मज़तर ने बरेली की मरकज़ियत को आ़ला हज़रत ईमाम अहमद रज़ा और आपकेशहज़ादा हूज़ूर मुफ़्तीए आ़ज़मे हिन्द रहमतुल्लाह अलैहमा के दौरे मस्ऊद तक साबित करने की कोशिश की है। बरेली क्यों मरकज़ कहलाया, कुछ समझा आपने?

दो दर्जन से ज़्यादा ज़बरदस्त बद्दीनों के फ़ितने व हमलों के मुक़ाबिल तन्हा आ़ला हज़रत अलैहि. र्रहमा का क़लमी जिहाद, जिसमें सैंकड़ों तस्नीफ़ात और बातिल अदयान व मज़ाहिब का रद। बल्कि बरेली से हिफ़ाज़ते इस्लाम व सुन्नियत केलिए आ़ला हज़रत अलैहिर्रहमा की अ़ज़ीम दीनी ख़िदमात। सत्तर (७०) से ज़्यादा उलूम व मआ़रिफ़ पर आपकी तस्नीफ़ात। ख़ासकर अदयाने बातिल और मुर्तदीन के बातिल अ़क़ाईद के रद का सिलसिला, जो आपकी पूरी उम्रशरीफ़ में जारी रहा। यही मरकज़ है यह एक ज़बरदस्त तहरीक है। इसी तहरीक का नाम मरकज़ है। इसी को हज़रत हुज्जतुल इस्लाम ने क़ायम रखा। आपके बाद हुजूर मुफ़्तीए आ़ज़मे हिन्द अलैहिर्रहमा ने क़ायम रखा। आपके बाद हज़रत ताजुश्शरिआ़ अज़हरी मियां साहब मद्दज़िल्लाहुलआ़ली क़ायम रखे हुए हैं। यक़ीनन बरेली की मरकज़ियत क़ायम है।

जनाब मज़तर साहब! यह मरकज़ियत और आ़ला हज़रत के ज़रिए अबताले बातिल की जो तहरीक बरपा हुई थी, हज़रत अज़हरी मियां साहब के अपने वक़्ते मुक़र्ररह पर दुनिया से तशरीफ़ ले जाने के बाद भी क़ायम रहेगी। खुदानख़्वास्ता बयकवक़्त बरेली के तमाम हज़रात इस दुनिया से तशरीफ़ ले जाएं, फिर भी बरेली ही अहलेसुन्नत का मरकज़ है और रहेगा। अशरफ़िया मुबारकपूर के बुग्ज़े अज़हरी मियां के शिकार हज़रात, बिलखुसूस जनाब मज़तर। मरकज़ के मानी ख़ूब अच्छी तरह समझें। बरेली की मरकज़ियत पर जब बनामे सियादत फ़ितने बरपा किए गए, सैकड़ों सफ़्हात पर मुशतमिल मवाद मैंने अहलेसुन्नत को दिया जो ''माहनामा सुन्नी आवाज़, नागपूर'' और मेरी दिगर किताब से ज़ाहिर है।

जामेआ़ अशरफ़िया के बअ़ज़ उलमा जो मौजूदा दौर में बरेली की मरकज़ियत को उठा कर मुबारकूर लाने में बड़ी जद्देजहद फ़रमा रहे हैं, उनका सारा ज़ोर तलबा की बोहतात और ज़राए आमदनी की कसरत और उनसे हासिल होने वाले करोड़ो रूपियों का हुसूल और तलबा के उर्दु, अ़रबी व फ़ारसी ख़िताबात पर है।

मौजूदा अशरफ़िया मुबारकपूर के अरबाबे इक़्तेदार सैकड़ों तलबा का दाख़ला और सैकड़ों तलबा का दाख़ला ना होने की वजह से वापसी और अपने क़ायम किए हुए निज़ामे तालीम को पूरे मुल्क में मुम्ताज़ मक़ाम क़रार देने के दावे और तलबा की उर्दु, अंग्रेज़ी और अ़रबी वग़ैरह ज़बानों में तक़रीरों को मरकज़ी हैसियत क़रार दिया है। वाक़ई अगर इन हज़रात की यही बात असल है तो, वो लोग अब इस ज़अ़म में ना रहें। हम भी सैकड़ों बल्कि हज़ारों तलबा का दाख़ला कर सकते हैं और सैकड़ों बल्कि हज़ारों तलबा को गुंजाईश ना होने की वजह से उनको वापस कर सकते हैं। आजके दौर में लोग जो बेहतर से बेहतर की तलाश में पूरे इंहेमाक के साथ लगे हुए हैं। तालीम में बेहतर से बेहतर की तलाश में अशरफ़िया मुबारकपूर मुम्ताज़ मक़ाम रखता है। यही माहौल बल्कि इससे बढ़ कर कोई और इदारा क़ायम करे तो इस वक़्त अशरफ़िया की मरकज़ियत का क्या होगा? यह जुनूनी और ग़ैर माकूल बातें छोड़ दीजिए। जब अशरफ़िया से ज़्यादा तलबा अहलेसुन्नत के किसी और इदारे में जमा हो जाएं तो फिर अशरफ़िया की मरकज़ियत उन्हीं के बनाए हुए क़ानून से ख़त्म हो जाएगी।

एक वाक़िया का ज़िक्र करना मुनासिब समझता हूं। चन्द साल पहले का ज़िक्र है, अशरफ़िया मुबारकपूर के तीन तलबा जोशायद मध्य प्रदेश या छत्तीसगढ़ इलाक़े से तअ़ल्लुक रखते थे, वो तीन तालिबे इल्म नागपूर आए थे। अमजदिया, नागपूर में उन्होंने अपना तालीमी ज़ोम का अंदाज़ जो इख़्तेयार किया था, उस पर सभी को हैानी थी। ऐसा लग रहा थ कि अशरफ़िया मुबारकपूर में अब तालीम के साथ तवाज़अ़ व इंकेसारी, अ़जज़ व फ़रोतनी सिखाई नहीं जाती। सिर्फ़ तालीम और उस पर उज़्ज़ह उनका ख़ास जौहर है। चन्द साल से दारूलउलूम अमजदिया, नागपूर को फ़राग़त के बाद जामेआ़ अज़हर, मिस्र में दाख़ले की मंज़ूरी मिल चुकी है। इस में अमजदिया, नागपूर से मिस्र में दाख़ले के लिए एक तालिबे इल्म, जो ऐसे मदरसे से आया था जो बज़ाहिर अशरफ़िया की तरह मशहूर नहीं और ना तालीम व तरबियत काशोहरा वो तालिबे इल्म महाराष्ट्र ही का था और इंतेहाई इस्लामी अ़ज्ज़ व इंकेसारी और दिगर ख़ूबियों को लिए हुए था। उन तीनों तालिबे इल्मों ने इस ग़रीबुलतबअ़ तालिबे इल्म को अ़रबी ज़बान में फ़ख़्र व ग़ुरूर के अंदाज़ में गुफ़्तगू के पर्दे में उसको बेवक़ूफ़ बनाने और नाकारा साबित करने और हंसी उड़ाने के सिवा कुछ नहीं किया था। वो तालिबे इल्म जो हिन्दुस्तान के मशहूर अ़लिमेदीन और अ़ज़ीम मुक़र्रिर हज़रत मौलाना सग़ीर अहमद जोखनपूरी साहब के मदरसे का नया नया फ़ारिग़ तालिबे इल्म था। वो उनके जवाब में हां, जी,शुक्रिया, आपकी महरबानी जैसे अलफ़ाज़ से किनाराकश होने की कोशिश कर रहा था। जब उस तालिबे इल्म ने यह देखा कि मुझे बहुत बेवक़ूफ़ बनाया जा रहा है तो मूड़ बदला, अपने फ़न का मुज़ाहिरा करने पर उतर आया । उसके बाद उस तालिबे इल्म ने बहुत आ़ला और उमदा अ़रबी अलफ़ाज़ से गुफ़्तगूशुरू की, अब अशरफ़िया के यह तीनों जो उस तालिबे इल्म को बेवक़ूफ़ बनाने की कोशिश में थे, वो छेंप गए। अब वो पहलूतही करने लगे। अब यह तालिबे इल्म पूरेशबाब पर अ़रबी में उमदा गुफ़्तगू जारी रख कर साबित करने लगा कि, फ़न को हासिल करने के बाद ग़ुरूर व तकब्बुर नहीं करना चाहिए बल्कि इस दुनिया में एक से बढ़ कर एक हैं। अ़रबी में तक़रीर

का यह आ़लम है, अहलेसुन्नत के मदारिस में तालीम ना सिर्फ़ अशरफ़िया में आ़ला मेयार की कहलाती है, इससे ज़्यादा आ़ला मेयारी तालीम और मदारिसे अहलेसुन्नत में भी हो रही हैं। लेकिन मौजूदा अशरफ़िया मुबारकपूर के बअ़ज़ या चन्द उलमा और तलबा में फ़रोतनी नहीं है। जिस अंदाज़ से तालीम पर उन्हें ग़ुरूर है, इससे अच्छी तालीम और दिगर मदारिस में भी है। लेहाज़ा यह हज़रात फ़ख़्र व ग़ुरूर से काम नहीं ले सकते।

अब रहा तलबा की बोहतात का मआ़मला। मुझे यह भी बात तस्लीम कि तलबा की तादाद दिगर मदारिस से ज़्यादा अशरफ़िया मुबारकपूर में है। अब वो मक़ाम दूर नहीं कि अहलेसुन्नत के ऐसे मदारिस ने भी कामशुरू कर दिया है। चन्द साल के बाद वो मदारिस अशरफ़िया मुबारकपूर के चन्द हज़रात ने मुबारकपूर को मरकज़ बनाने का जो चक्कर चलाया है, वोशर्मिन्दए ताबीर होता हुआ नज़र आ रहा है। ऐ अशरफ़िया मुबारकपूर के ज़िम्मादारो! कोई इदारा तालीम और कसरते तलबा या नश्र व इशअ़त की बुनियाद पर हरगिज़ क़रार नहीं पाया। तहरीक की बुनियाद पर मरकज़ क़रार पाता है, वो तहरीक चलाने के लिए आप सब मिल कर कहीं से आ़ला हज़रत ईमाम अहमद रज़ा क़ुद्दसिर्रहु जैसीशख़्सियत लाएं जो बग़ैर प्रोपगंडे के वो इदारा वोशहर मरकज़ कहलाएगा। लेहाज़ा हुज़ूर हाफ़िज़े मिल्लत अलैहिर्रहमा के ज़मानए हयात में भी यहशोर उठा कि अशरफ़िया मुबारकपूर को मरकज़ क़रार दिया जाए तो हुज़ूर हाफ़िज़े मिलत अलैहिर्रहमा निहायत मतानत और संजीदगी से उन्हें जवाब दिया था कि, "**ठीक है, पहले आप सब लोग मिल कर सैय्यदना आ़ला हज़रत के मज़ार पूर अनवार को बरेली से उठा कर मुबारकपूर ले आओ। खुदबखुद मुबारकपूर मरकज़ बन जाएगा।**" यह कितना संजीदा माकूल जवाब था, जिस पर सब लोग लाजवाब हो गए। "माहनामा अशरफ़िया मुबारकपूर–माह जुलाई २०१४" के मज़कूरा इदारिया में हुज़ूर बुरहाने मिल्लत अलैहिर्रहमा अशरफ़िया मुबारकपूर को मरकज़े इल्मे तहरीर फ़रमाया है। इस पर हमारा तजज़िया देखिए।

यक़ीनन हुज़ूर बुरहाने मिल्लत अलैहिर्रहमा ने अशरफ़िया मुबारकपूर को मरकज़े इल्म तहरीर फ़. रमाया जो बिल्कुल सही है। हुज़ूर हाफ़िज़े मिल्लत अलैहिर्रहमा के ज़मानए बा बरकात में अशरफ़िया मुबारक. पूर की तालीम का यही अंदाज़ था। सिर्फ़ तालीम में अशरफ़िया इस ज़माने में दिगर मदारिस के मुक़ाबिल हाफ़िज़े मिल्लत अलैहिर्रहमा की ज़ात की वजह से मरकज़ी हैसियत का हामिल था। उस वक़्त के तुलबा का कुछ और आ़लम था। अब वो माहौल कहां। हुज़ूर बुरहाने मिल्लत अलैहिर्रहमा ने इसी की तरफ़ इशारा किया है।

जनाब मज़तर और जनाब मुदीर अच्छी तरह समझें कि, हुज़ूर बुरहाने मिल्लत अलैहिर्रहमा ने इज़ाफ़त के साथ मरकज़े इल्म तहरीर फ़रमाया है। मुतलक़न मरकज़ नहीं तहरीर फ़रमाया है। किसी इल्म व फ़न की तरफ़ इज़ाफ़त के साथ मरकज़ लिखना और किसी फ़न व इल्म की तरफ़ बग़ैर इज़ाफ़त के मरकज़ लिखना, दोनों में फ़र्क़ है। जब मरकज़ की निस्बत क़ौम और जमाअ़त की तरफ़ होती है। जिसे अहलेसुन्नत का मरकज़ हिन्दुस्तान के सुन्नी मुसलमानों का मरकज़ वग़ैरह यह अलफ़ाज़ अपनी जामेअ़त की

तरफ़ दलालत करते हैं और यह अलफ़ाज़ दाईमी होते हैं। सवा सौ साल से ज़ाईद अ़र्से से इन अलफ़ाज़ का इत्लाक़ सिर्फ़ बरेली की मरकज़ियत पर ही होता है। लफ़्ज़े मरकज़ अपने मालए और माअ़लिया कोशामिल है, जो अपने तमाम दीनी तहफ़्फ़ुज़ात को लिए हुए है। मुतलक़ अपने इत्लाक़ पर बोला जाता है। जैसा कि हमने पिछली इसी तहरीर में बरेली की मरकज़ियत पर हलकी सी रौशनी डाली है। सैय्यदना आ़ला हज़रत की तहरीक का खुलासा यही है कि, तेरहवीं सदी के अवाख़िर और ख़ासतौर पर चौधवीं सदी केशुरू में आपने अहिय्याएदीन, अहक़ाक़े हक़ व अबताल बातिल और फ़रोग़ सुन्नत की तहरीक तहफ़्फ़ुज़ दीने मुस्तफ़ा ﷺ के लिए और कुफ़्फ़ार व मुरतदीन और जुमला बद्दीनों के बातिल नज़रियात के ख़िलाफ़ चलाई है, इसी तहरीक का नाम "**मरकज़**" है। हज़रत बुरहाने मिल्लत ने बग़ैर इज़ाफ़त के मरकज़ नहीं तहरीर फ़रमाया। वो जानते थे कि, बग़ैर इज़ाफ़त के मरकज़ अ़लैहदा है और किसी भी इल्म और फ़न की तरफ़ इज़ाफ़त कर के मरकज़ कहना अ़लैहदा है। चन्द अहले इल्म और हिन्दुस्तान व पाकिस्तान के ख़्वास अच्छी तरह समझ लें। बग़ैर इज़ाफ़त के सिर्फ़ लफ़्ज़े "मरकज़" का इतलाक़ आ़ला हज़रत कुद्दसिर्रहु की वजह से सिर्फ़ बरेलीशरीफ़ ही के लिए कहा जाता है। अशरफ़िया मुबारकपूर तो क्या, दुनिया को कोई अ़ज़ीम से अ़ज़ीम तालीमी और फ़नी मुंफ़रूलमिसाल इदारा कहलाने वाला इस को छीन नहीं सकता। الحمدلله यह मक़ाम सिफ़ बरेली शरीफ़ को हासिल है।

बरेली की मरकज़ियत :आप क़िरने अव्वल से ले कर आज तक तारीख़े इस्लाम का मुताल्ला कीजिए तो यह बात रोज़ रौशन की तरह वाज़ेह हो जाएगी कि हर दौर में अ़क़ाईदे बातिला के हामिलीन के ख़िलाफ़ दीने उसूल और अ़क़ाइदे बातिला से हिफ़ाज़त और अपने ईमान व अ़क़ीदे की सलामती के लिए अपने आप को किसी ऐसी ज़ात या किसी ऐसेशहर की तरफ़ मंसूब किया गया, जो ज़माने में दीन व ईमान की हिफ़ाज़त का ज़ामिन है। वरना आ़म मुसलमान मुद्दियाने इस्लाम के दावए इस्लाम व ईमान और ज़ाहिरी चमक व दमक की वजह से गुमराहियत में मुब्तेला हो जोते।

अगर यह ज़रूरी ना होता तो चारों मस्लक हनफ़ी, मालिकी, शाफ़ई, हंबली के साथ अ़क़ाईद में दो मस्लक मातरेदी और अशअ़री वजूद में नहीं आते। हालांकि इस वक़्त अजल सादाते किराम व अहले बैते अत्ह. ार मौजूद थे। हुज़ूर सैय्यदना अ़ली बिन मूसा रज़ा २०३ हि., सैय्यदना ईमाम मूसा रज़ा बिन जाफ़र काज़िम रज़ा १८३ हि., हुज़ूर सैय्यदना ईमामजाफ़र सादिक़ १४८ हि., हुज़ूर सैय्यदना सैय्यदुश्शोहदए गुलुलूंक़बा ईमामे हुसैनशहीद दश्ते कर्बोबला ६१ हि. रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हुम से बढ़ कर अहले बैत में कौन हो सकता है।

इन हज़रात के मरतबत से उम्मत अच्छी तरह वाक़िफ़ है। हिदायत व रहनुमाई के लिए क्या इन हज़रात की ज़वाते मुक़द्दसा काफ़ी नहीं थीं? अगर कोई अपने आपको मस्लके अ़ली बिन मूसा रज़ा या मस्लके काज़मी या मस्लके जाफ़री या मस्लके बाक़री या मस्लके आ़बिदी या मस्लके हुसैनी का हामिल कहलाए तो क्या निजात के लिए काफ़ी नहीं? या मस्लके आ़बिदी या मस्लके हुसैनी का मुक़ल्लद कहलाए तो क्या निजात के लिए काफ़ी नहीं है? यक़ीनन इन हज़रात की तरफ़ निस्बत करना निजात के लिए काफ़ी है तो

फिर क्यों सैय्यदना ईमामे आज़म अबू हनीफ़ा, सैय्यदना ईमामे मालिक, सैय्यदना ईमामेशाफ़ई, सैय्यदना ईमामे अहमद बिन हंबल व सैय्यदना ईमामे अबू मंसूर मातरीदी व सैय्यदना ईमामे अबुलहसन अशअ़री रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हुम की तरफ़ मंसूब करते हुए मस्लके हंफ़ी, मस्लके मालिकी, मस्लकेशाफ़ई, मस्लके हंबली, मस्लके मातरीदी, मस्लके अशअ़री वजूद में आए कि जिन मस्लकों और मज़हबों पर उम्मत में बड़े बड़े औलियाए किराम, अग़वास व अक़्ताब, बदला व नजबा व फ़ुक़हा व मशाईख़, उलमा व आ़मतुल मुस्लिमीन क़ायम हैं और इन मज़हबों और मस्लकों पर फ़ख़्र करते हैं।

क्या कोई कह सकता है कि, मस्लके जाफ़री व बाक़री वग़ैरह मसालिके हक़ पर नहीं हैं? यक़ीनन यह मस्लके हक़ हैं और मदारे निजात हैं आप देखते जाईए हुज़ूर सैय्यदना ईमाम हुसैनशहीदे करबला रज़िअल. लाहो तआ़ला अन्हुम से लेकर अईम्मए अहले बैते अतहार तक के नाम ले लेकर इन की आड़ में बदतरीन गुमराह व बेदीन व मुरतद फ़ीरक़े वजूद में आए।

हमारे अईम्मए अरबआ़ व अईम्मए फ़ुक़हा रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हुम का एहसान है कि, उन्होंने मस्लके हुसैनियत, मस्लके मातरीदी और मस्लके बाक़री, मस्लके जाफ़री के नाम पर बातिल व गुमराह अ़क़ाइ. द को छांट कर इन मसालिक के झूटे नाम लेवाओं से मुम्ताज़ कर के असली हुसैनी मस्लक, आ़बिदी मस्लक, बाक़री मस्लक, जाफ़री मस्लक के सही ख़द व ख़ाल को पेश करने के लिए और अ़क़ाइद की दुरूस्तगी और निजाते आख़ेरत के लिए हनफ़ी, मालिकी, शाफ़ई, हंबली, मातूरीदी, अशअ़री मसालिक पर इज्माअ़ हो गया। जिस पर उम्मत के अकाबिर औलियाए किराम से ले कर बड़े बड़े फ़ुक़हा व मुहद्दिसीन, अग़वास व अबदाल व अक़्ताबे अईम्मा व उलमा उन्हीं मस्लकों पर क़ाएम रहे और उस पर खुद चले और उम्मत को इन्हीं पर चलने की तलक़ीन व ताकीद फ़रमाते रहे।

हालांकि हमारे आईम्मए अरबआ़ और ईमाम अबू मंसूर मातूरीदी व ईमाम अबुलहसन अशअ़री रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हुम वही फ़रमाते हैं जो हुज़ूर सैय्यदना ईमाम हुसैन, ईमाम ज़ैनुलआ़बेदीन व सैय्यदना ईमाम बाक़र व सैय्यदना ईमाम जाफ़र सादिक़ रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हुम इरशाद फ़रमा चुके हैं। इस के बावजूद हुसैनी मस्लक, आ़बिदी मस्लक, बाक़री मस्लक, जाफ़री मस्लक का नाम उम्मत में राईज नहीं है। क्या मज़कूरा मसालिक निजात के लिए काफ़ी नहीं हैं?

चूंकि इन मसालिक का नाम लेकर गुमराह व बदमज़हबों व मुरतदों ने दीन के अंदर अ़क़ाईदे इस्ल. ामिया के ख़िलाफ़ नए नए फ़ितने पैदा किए, इस लिए इनसे अपने आपको मुम्ताज़ करने के लिए तक़लीदे अईम्मा को वाजिब क़रार दिया। इसी तनाज़िर में हंफ़ियत व सुन्नियत के दावे के साथ कैसे कैसे बातिल अ़क़ाईद वजूद में आए। इन सब के रद व अबताल और सही अ़क़ाईद के पहचान और सुन्नियत व हंफ़ियत को इख़्तेलाफ़े अ़क़ाईदे बातिला से मुम्ताज़ करने के लिए '' **बरेली'' अहलेसुन्नत का मरकज़ कहलाया** '' जो सुबह क़ियामत तक कहलाएगा।

इसी तरह जब हंफ़ियत, मालकियत, शाफ़िअ़त व हंबलियत व मातूरीदियत व अशअ़रियत के नाम पर

नए नए अक़ाईद जनम लेनेशुरू हुए तो असल हंफ़ियत व मालकियत व शाफ़ियत व हंबलियत व मातरीदीयत व अशअ़रियत को अक़ाईदे बातिला से छांट कर गुमराहियत व बे दीनियत से मुम्ताज़ कर दिया।

जिस ज़ात ने यह फ़रीज़ा अंजाम दिया, उस ज़ात की तरफ़ मंसूब कर के या जिसशहर के उलमा ने यह जद्दोजहद फ़रमाई, उन उलमा के शहर की तरफ़ अपने आपको मंसूब करना असल हंफ़ियत, मालकियत, शाफ़िअ़त, हंबिलियत, मातूरिदीयत व अशअ़रीयत पर क़ायम रहने के लिए ज़रूरी हो गया।

इसकी एक कड़ी मुजद्दिदे अल्फ़ेसानी हज़रत शैख़ अहमद सरहिन्दी रज़िअल्लाहो तआ़ाला अन्हो हैं। तारीख़ का क़ारी जानता है कि, अकबरी दौरे इब्तेला में जब हंफ़ियत के नाम पर दीने इलाही क़ायम करके दीने मतीन में फ़ितने बरपा किए गए, असल हंफ़ियत को बाक़ी रखने के लिए अकबरी फ़ितने के ज़माने में अपने आपको मस्लके मुजद्दिद का हामिल कहलवाना काफ़ी था।

मस्लके मुजद्दिदी से मुराद, उस ज़माने में सुन्नी मुराद लिया जाता था जो हंफ़ी व मातरिदी है। उससे कोई नया मज़हब या नया दीन मुराद नहीं लिया जाता था। इसी तरह फिर जब मस्लके हंफ़ियत के नाम पर दीन के ख़िलाफ़ फ़ितने बरपा किए गए, यहां तक कि अंग्रेज़ का तसल्लुत हुआ और उस दौर में इस्माईली, नेचरी मस्लक, सुलहकुल्ली मस्लक वजूद में आए और सब के सब सुन्नी हंफ़ी बन कर दीन में फ़ितने बरपा किए।

उनके अ़क़ाईदे बातिला से बचने और वो अपने अ़क़ाईदे इस्लामिया पर कारबंद रहने और निजाते आख़ेरत के लिए मज़करा गुमराह व मुरतद व बेदीन फ़िरक़ों, मस्लकों से अलग रहने के लिए अ़रब व अ़जम के अकाबिरे अईम्मा व उलमा व फ़ुक़हा ने मस्लके आ़ला हज़रत या बरेलवियत के अलफ़ाज़ से मस्लके हंफ़ियत को मारूफ़ किया। अब यह अल्फ़ाज़ दीन व सुन्नियत व हंफ़ियत के लिए अ़लामती निशान बन गए। जैसा कि साहबज़ादा हज़रत मुहद्दिसे आ़ज़मे हिन्द जनाब अ़ल्लामा मुहम्मद मदनी कछोछवी ने अपने वालिदे माजिद और अकाबिरे उलमाए अहलेसुन्नत से खुली बग़ावत से पहले वा यह लिख चुके हैं, '' **अब कोई अशाअ़रा से हो या मातरीदिया से हंफ़ी याशाफ़ई मालकी हो या हंबली, अगर वो सही तौर पर मस्लके अहलेसुन्नत व जमाअ़त पर है तो मज़कूरतुलसद्र मरवजहे इस्तेलाह की रौशनी में 'बरेलवी' है। अब 'बरेलवी' होने के लिए 'फ़ाज़िले बरेलवी' की ज़ाते गिरामी तक किसी के सिलसिलए इल्मी या सिलसिलए बैत व इरादत का पहचानना या शहरे बरेली में मुक़ीम रहना ज़रूरी नहीं रह गया। इसी लिए ऐसों को भी बरेलवी कहा जाता है, जिसने उम्र भर बरेलीशरीफ़ को ख़्वाब में भी नहीं देखा। नीज़ जिसका इल्मी या नस्बी या किसी दूसरी तरह का कोई सिलसिला फ़ाज़िले बरेलवी तक नहीं पहुंचता बल्कि जहां फ़ाज़िले बरेलवी की आवाज़ तक नहीं पहुंचती, इस इस्तेलाह ने ''बरेलवियत'' को वहां तक पहुंचा दिया। अब इस दुनिया का हर वो फ़र्द ''बरेलवी'' है जो मस्लके अहलेसुन्न्त पर वाक़ईतौर पर गामज़न है।**'' (माहनामा हुज्जाज़े जदीद–सितम्बर–अक्तोबर १९८६, स.६)

अब वो मशाईख़ व सादात को ख़्वामवख़्वाह ''बरेलवियत'' या ''मस्लके आ़ला हज़रत'' से चिढ़ पैदा

हो गई है। उन लोगों को चाहिए कि सब से पहले अ़ल्लामा मुहम्मद मदनी मियां साहब कछोछवी से सवाल करें कि, ''आपने यह पांचवां मस्लक कैसे ईजाद किया।?'' यह लफ़्ज़ बरेलवी या मस्लके आ़ला हज़रत, वहांबियों, देवबंदियों, क़ादयानियों, नेचरियों, सुलहकुल्लियों वग़ैरह के मुक़ाबले में बोला जाता है। इसलिए कि यह गुमराह व मुरतद मस्लकों पर चलने वाले भी सुन्नियत व हंफ़ियत के मुद्दई हैं।

मस्लके आ़ला हज़रत से मुराद, सुन्नियत व हंफ़ियत के ख़िलाफ़ कोई नया दीन व नया मस्लक नहीं बल्कि वहीं हंफ़ी मस्लक मुराद है जिस पर तमाम अईम्मा व औलिया व उलमा व आ़मतुल मुस्लिमीन क़ायम रहे।

अहले इल्म व फ़हम को यह अच्छी तरह मालूम हो गया कि, हिदायत व निजात के लिए और बातिल व गुमराह व मुरतद फ़िरक़ों के ग़लत अ़क़ाईद से मुम्ताज़ होने और असल दीन पर सिबात क़दमी और हंफ़ियत पर क़ायम रहने के लिए मौजूदा दौर में बरेलवी मस्लक या मस्लके आ़ला हज़रत पर क़ायम रहना ज़रूरी है। वरना पिछली सदी में कैसे कैसे बातिल अ़क़ाईद व नज़रियत मुसल्लत किए गए, जिस की तरफ़ हम मुसलसिल कई साल पेश्तर से ''सुन्नी आवाज़, नागपूर'' और दिगन कुतुब व रसाईल के ज़रिए वाज़ेह कर रहे हैं। जिसमें मशहूरे ज़माना किताब ''हदियए हाशमी, अनोखे नूर की बरसात, हाशमी कैसेट पर मारूज़ाते हुसैनी, गुलफ़शांनियां, बदलते ज़ाविए'' वग़ैरह कुतुब व रसाईल में वाज़ेह कर दिया है। यहां उन बातिल अ़क़ाईद के तफ़्सील की ज़रूरत नहीं।

अशरफ़िया मुबारकपूर ने अपने ज़ोअ़म में तलबा की कसरत पर अपने इदारे को मरकज़ बनाने पर बज़िद है, वो अच्छी तरह समझ ले। अगर अशरफ़िया मुबारकपूर में अब जितने तलबा हैं, उनसे हज़ारों गुना ज़्यादा तादाद में तलबा जमा हो जाएं और तलबा ना सिर्फ़ अ़रबी, फ़ारसी, उर्दु, अंग्रेज़ी में तक़रीर पर क़ादिर हों। बल्कि दुनिया की अकसर ज़बनों पर कुदरत हो, फिर भी अशरफ़िया मुबारकपूर मरकज़ नहीं कहला सकता। चाहे बरेलीशरीफ़ में हज़रत ताजुश्शरिआ़ अज़हरी साहब क़िबला और दिगर बरेली के शहज़ादे इस दुनिया में मौजूद हों या ना हों। बरेली शारीफ़ सुबह क़ियामत तक अहले सुन्नत का मरकज़ ही कहलाएगा। बल्कि जनाब मज़तर और जनाब मुदीरे अशरफ़िया बल्कि पूरे अशरफ़िया को अपनी निजात के लिए बरेली हीं को मरकज़ मानना पड़ेगा। वरना यह लोग बरेली की मरकज़ियत से बेज़ारी का ऐलान कर दें, देखें फिर उनका क्या हश्र होता है।

वहाबियत नवाज़ किताबो का रद

अज़ : मुफ़्ती अ़ब्दुर्रहमान साहब क़िबला क़ादरी

इक़्तेबास नम्बर १ :

मौलाना ततहीर ने अपनी किताब "आओ दीन पर चलें" के स. १५ पर लिखा कि, " **यहां यह बात भी क़ाबिले ज़िक्र है कि कुछ नामनिहाद इस्लामी गुम. राह फ़िरक़े और बदमज़हब जमाअ़तों के बारे में उन में मेल-जोल ना रखने, उनका बाईकाट करने का फ़तवा दिया जाता है, वो मेरे ख़्याल में उन्हें ईमान के कमज़ोर, बेइल्म अ़व्वाम तक महदूद होना चाहिए, जो उनके फ़रेब में आ सकते हों उनका असर कुबूल कर सकते हों। लेकिन वो अहले इल्म और मज़बूत लोग जो उन्हें हक़ पर लाने और उन पर असर डालने की सलाहियत व हिम्मत व ताक़त रखते हैं, वो अगरशरई हुदूद में रह कर उनसे बात-चीत करें तोशायद यह मस्लेहत व हिकमत के क़रीब है।**"

गुज़ारिशे क़ादरी : मौलाना ने इक़्तेबासे मज़कूर में लिखा कि, "मेरे ख़्याल में वहाबियों और बदमज़हबों से मेल–जोल पर पाबंदी का हुक्म सिर्फ़ अ़व्वाम तक महदूद होना चाहिए।"

मौलाना ततहीर साहब ! आपसे मेरी अव्वलन गुज़ारिश यह है कि, पहली फ़ुरसत में आप अपना ख़्याल बदल दें। इस लिए कि आप का यह ख़्यालशरी. अ़त से टकराता है। क्योंकि शरीअ़त ने सिर्फ़ अ़व्वाम को नहीं बल्कि सब को रोका है और जबशरीअ़त ने सब को रोका है तो फिर आपको पैदा होने वाला यह ख़्याल कि, "यह हुक्म सिर्फ़ अ़व्वाम तक महदूद होना चाहिए। " यक़ीनन मिन जानिबुलशैतान है और अगर आप अपना यह ख़्याल बदलने के लिए तैय्यार नही तो फिर बताईए कि, आपको यह ख़्याल क्यों और कहां से पैदा हुआ? आख़िर आपका यह ख़्याल तमाम उलमा के बयान व इरशाद के ख़िलाफ़ है या नहीं? अगर हम आपके ख़्याल को 'इज्तेहाद' कहें तो यह भी ठीक नहीं कि आप मुज्तहिद तो हैं नहीं कि 'मुत. तफ़िक़ अ़लैह' इरशादाते अईम्मह के ख़िलाफ़ मस्अला निकालें। मुतालआ़ फ़रमईए 'फ़तावए रज़वियह–ग़ैर मुतरजम, जि. ६, स. ७० पर सरकार आ़ला हज़रत ने इरशाद फ़रमाया कि, "**आज कोई मुज्तहिद नहीं कि मुत्तफ़िक़ अ़लैह**।" इरशादाते आईम्मा के ख़िलाफ़ दलील से मस्अला नाले। यहां तो आपके पास दलील भी नहीं है सिर्फ़ ख़्याल ही ख़्याल है।

अगर आपके इस ख़्याल को हम क़ियास कहें तब भी ठीक नहीं। इसलिए कि क़ियास के लिए मुक़ीस अ़लैह ज़रूरी है। अगर यह आपका क़ियास है तो इस का मुक़ीस अ़लैह कौन है? या बग़ैर दलील सिर्फ़ आपके ख़्याल ही को हमशरीअ़त मान लें। (معاذالله)

बुज़ुर्गो का तरीक़ा और मौलाना का ख़्याल : मौलाना ततहीर साहब ! बुज़ुर्गों का तरीक़ा आपके ख़्याल के ख़िलाफ़ मिलता है। आप 'फ़ि ज़अ़मह' अपने को बड़ा मज़बूत इल्म वाला समझते हैं। बहुत ऐतेमाद है आपको अपने इल्म और तक़वा पर। इसी लिए आपने इस तरह का क़ौल किया। मगर इास तरह का क़ौल करने से पहले कम अज़ कम अकाबिर का तरीक़ा देख लेते। "अद्दलाईलुल क़ाहिरह अ़लल कुफ़. रतुल नयाशरह" में सरकार आ़ला हज़रत रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो तहरीर फ़रमाते हैं, " **ईमाम मुहम्मद बिन सीरीनशागिर्द अनस रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो के पास दो बदमज़हब आए और अ़र्ज़ की, "कुछ अह. ादीसे नबी ﷺ सुनाएं।" फ़रमाया, "मैं सुनना नहीं चहता ।" उन्होंने इसरार किया। फ़रमाया, "तुम दोनों उठ जाओ या मैं उठ जाता हूं।" आख़िर वो ख़ाईब व ख़ासिर चले गए। लोगों ने अ़र्ज़ की, "ऐ ईमाम ! आपका क्या हर्ज था, अगर वो कुछ आयतें**

या हदीसें सुनाते।'' फ़रमाया, ''मैंने ख़ौफ़ किया कि वो आयात व अहादीस के साथ अपनी कुछ तावील लगाएं और वो मेरे दिल में रह जाए तो हलाक हो जाऊं।'' आईम्मा को यह ख़ौफ़ था और अब अव्वाम को यह जुर्रत है। (ولاحول ولاقوة الا بالله) (फ़तावए रज़. वियाशरीफ़ मुर्तजम-स. १०६, जि. १५)

इबरत का मक़ाम :मौलाना ततहीर साहब ! यह आप केलिए इबरत का मक़ाम है कि, सैय्य. दना मुहम्मद बिन सीरीन जैसा उलूमे दीनियह का ईमाम अपने दीन व मज़हब की हिफ़ज़त की ख़ातिर बदमज़हब (बनामे मुसलमान) की ज़बान से कुरआन व हदीस सुनने के लिए तैय्यार नहीं। तुम्हारे लिए यह क्यों कर जाईज़ हो सकता है कि, आप सिर्फ़ बदमज़हब नहीं बल्कि मुर्तदों से मेल–जोल करे। क्या आपका ईमामन ईमाम मुहम्मद बिन सीरीन के ईमामन से ज़्यादा मज़बूत है? क्या आपका इल्म ईमाम मुहम्मद बिन सीरीन रज़िअल्लाहो तआला अन्हो से ज़्यादा कामिल व मुकम्मिल और ठोस है?

और क़रईन ! तवज्जोह करें कि क़ाबिले ग़ौर है कि मौलाना ततहीर साहब का यह भी जुम्ला है कि, ''हुदूदेशरीआ़ में रह कर बात–चीत करें।'' मैं कहता हूं कि, ''हुदूदेशरीआ़ के अंदर रह कर जो काम किया जाए, वो सही होगा।'' यह हर ज़िअक़्ल जानता है कि, जब आप हुदूदेशरीआ़ के बाहर नहीं हैं तो वक़्त ही नहीं है। फिर आपको इतनाशक और इतनी घबराहट क्यों है? आज मुनाज़िरह होता है कि नहीं? मगर सही बात यह है (और यह अप भी अच्छी तरह जानते हैं) कि जिस चीज़ की इजाज़त आप चाहते हैं, वो हुदूदेशरीआ़ के अंदर है ही नहीं। इस लिए आपका कहना है कि, ''**बदमज़हबों से मेल-जोल के हुक्म की पाबंदी सिर्फ़ अव्वाम को होना चाहिए, मज़बूत इल्म वालों को नहीं**।'' अ़जब तमाशा है ! बदमज़हबों से मेल–जोल भी हो और हुदूदेशरीआ़ से बाहर भी ना हो। आख़िर डाईरेक्ट आप इस को तबलीग़ तो करने नहीं लगेंगे? फिर क्या होगा?

मुलाक़ात : अगर आपने बैठने को कहा और वो बैठा तो आपने बदमज़हब की इज़्ज़त की, यह ग़लत? अगर उसने सलाम किया और आपने जवाब दिया या आपने किया, यह दूसरा ग़लत। तो इब्तेदा ही ग़लत से हो रही है और आप कह रहे हैं, '' हुद. ूदेशरीआ़ में रह कर बात करें।'' क़ारेईन ! जुम्ला देखें, मुर्तदों से मेल–जोल और हुदूदेशरीआ़ में रह कर क्या कोई नईशरीअ़त बनाली है? मदीने वाले कीशरीअ़त में तो मुर्तदों से मेल–जोल हराम है। क्या आ़ला हज़रत कुद्दसिर्रहु से मज़बूत आपका ईमान है?

मौलाना ! अगर आपका मुतालआ़ ना हो तो 'सवान्हे आ़ला हज़रत' का मुतालआ़ कर लीजिए। हैद्राबाद दक्कन से एक राफ़ज़ी सिर्फ़ आ़ला हज़रत से मुलाक़ात के लिए आया था। एक साहब ने आकर बताया, ''**एक राफ़ज़ी हैद्राबाद से सिर्फ़ मिलने के लिए आया।'' आ़ला हज़रत ने उसकी तरफ़ कोई तवज्जोह ना की। फिर उसे भी कुछ बोलने की हिम्मत ना हुई। कुछ रूका, फिर खुद चला गया। जब वो चला गया तो, दूसरे साहब बोले कि, ''इतनी दूर से सिर्फ़ मिलने आया था, अगर इख़्लाक़न कुछ बात कर लेते तो क्या होता?'' सरकार आ़ला हज़रत जलाल में आगए। चेहरा सुर्ख़ हो गया और फ़रमाया, ''हमारे बुज़ुर्गो ने हम को यही इख़्लाक़ सिखाया है।''**

मौलाना ! बताईए ! क्या आ़ला हज़रत से ज़्यादा मज़बूत आपका इल्म है? या आ़ला हज़रत से ज़्यादा आपको दीन का दर्द है? या आ़ला हज़रत से ज़्यादा मज़बूत आपका ईमान है? आप बात करने की बात कर रहे हैं, आख़िर आ़ला हज़रत की शख़्सीयत का असर उस पर कुछ ना होता, तो हैद्राबाद से सिर्फ़ मुलाक़ात करने के लिए क्यों आता? अब मैं कहता हूं कि, ''आ़ला हज़रत का ईमान कमज़ोर तो था नहीं मगर आ़ला हज़रत ने बात तक करना गवारा ना किया, बल्कि तवज्जोह ही ना दी।

मौलाना ! क्या ख़्याल है आपका? आ़ला हज़रत का यह फ़ेअ़ल आपकी मस्लेहत से क़रीब है

या दूर है? मौलाना सुनिए ! आ़ला हज़रत का यह फ़ेअ़ल, आपके घरकी बनी हुई मस्लेहत से क़रीब हो या दूर हो, इससे हमको मतलब नहीं। मगर बुज़ुर्गों की मस्लेहत, उनकी हिकमत, इख़्लाक़े नबवी से बहुत क़रीब है।

इक़्तेबास नम्बर २ : मौलाना ततहीर अपनी किताब "आओ दीन पर चलें" के स. १४० पर लिखते हैं कि, मौलाना मुफ़्ती जलालुद्दीन साहब अमजदी फ़. रमाते हैं, "**औलियाए किराम का उर्स जाईज़ है, ज़रू. री नहीं और कोई मुसलमान उर्स को ज़रूरी समझ कर नहीं करता।**"

गुज़ारिशे क़ादरी :क़ारेईन ! मुफ़्ती जलालुद्दीन साहब का आख़िरी जुम्ला ग़ौर से पढ़ें। जिसमें उन्होंने साफ़–साफ़ कह दिया कि, "**कोई मुसलमान उर्स को ज़रूरी समझ कर नहीं करता।**" अब मैं आपके सामने मुफ़्ती जलालुद्दीन साहब के क़ौल को नक़्ल करने के बाद इसी सफ़्हा पर इबारते मज़कूरए बाला के बाद मौलाना ततहीर साहब ने जो अपना मुद्दआ़ बयान किया है, इसको पेश करता हूं।

मौलाना ततहीर का बयान : "यहां पर यह बताऊं कि जो अ़व्वाम ने मुस्तहिब और सिर्फ़ जाईज़ कामों को फ़र्ज़ व वाजिब समझ लिया है।" अब मैं कारेईन से गुज़ारिश करता हूं कि, मौलाना का यह जुम्ला देखें और मुफ़्ती साहब का आख़िरी जुम्ला देखें। मुफ़्ती साहब कह रहे हैं, "कोई मुसलमान उर्स ज़रूरी समझ कर नहीं करता" और मौलाना कहते हैं कि, "अ़व्वाम ने मुस्तहिब कामों को फ़र्ज़ व वाजिब यानी ज़रूरी समझ लिया है और हैरत तो यह है कि यह सब किताबे मज़कूर के एक ही सफ़्हा पर मौजूद है। उनको इतना भी होश नहीं कि ऊपर क्या लिखा है और नीचे क्या लिख रहा हूं।" अब मौलाना ततहीर साहब बताएं कि, इन दोनों में कौन सही है? आप या मुफ़्ती साहब?

शौक़े सलसह : मौलाना ततहीर साहब सुनिए ! यहां तीनशक़ें निकलेंगी। १. दोनों सही हों २. दोनों ग़लत हों ३. एक सही हो, एक ग़लत हो।

इन तीनों में से शक़े अव्वल और शक़े सानी की तरफ़ कोई रास्ता नहीं। (لاسبیل الی الا الاول والثانی) इस लिए कि दोनों ज़हिरूल बतलान हैं। क्योंकि अगर दोनों को सही कहें तो इज्तेमो नक़ीज़ीनावरया मुहाल। अगर दोनों को ग़लत कहें तो इरतेफ़ाए नक़ीज़ीन यह भी मुहाल। फ़स्बतुल मतलूब अब साबित हो गया कि, तीसरी शक़ सही है और वो यह है कि एक सही और एक ग़लत। तो सुनिए ! मुफ़्ती साहब की बात सही है और मौलाना ततहीर ग़लती पर हैं।

पढ़ो और हंसो : मज़े की बात तो यह है कि, मुफ़्ती जलालुद्दीन साहब क़िबला की वो इबारत जिस पर अभी एक वरक़ पहले मैं बहस कर रहा था कि, मुफ़्ती साहब ने साफ़–साफ़ लिख दिया कि, "उर्स वग़ैरह को कोई मुसलमान ज़रूरी समझ कर नहीं करता।" बऐना इसी इबारत को मौलाना ततहीर साहब ने इसी हवाले के साथ अपनी दूसरी किताब "दर्मियानी उम्मत" के स. १११ पर भी लिखा है और इस के बाद मौलाना ने इस का जो मतलब बयान किया है, वो सुनिए।

मौलाना का बयान कर्दा मतलब : **अब अगर इसे (उर्स, तीजा, चालीस्वां वग़ैरह) कोई ज़रूरी ख़्याल करता है या कहता है या अहले सुन्नत पर ज़रूरी समझने का इलज़ाम लगाता है तो यह उसकी जहालत, नादानी और बोहतान तराशी है** और यही मौलाना ततहीर साहब "आओ दीन पर चलें" के स. १४० पर यह दावा कर चुके हैं कि, "**अ़व्वाम ने मुस. तहिब कामों को फ़र्ज़ व वाजिब यानी ज़रूरी समझ लिया है" और इस इबारत को पहले नक़्ल कर चुका हूं। यहां भी कर देता हूं। मुंदर्जाज़ैल है .... और यहां यह बतादूं कि जो अ़व्वाम ने मुस्तहिब और सिर्फ़ जाईज़ कामों को ज़रूरी समझ लिया है, यह उन बअ़ज़ मुक़र्रेरीन की भी ग़लती है, जिन्होंने इसकी शरई हैसियत को वाज़ेह ना किया।**

नतीजा : अब क़ारेईन पढ़ें और हंसें कि ख़ुद

ही मौलाना ततहीर साहब कहते हैं कि, ''उर्स वग़ैरह को जो अहले सुन्नत पर ज़रूरी समझने का इलज़ाम लगाता है, वो जाहिल है, नादान है और बोहतान तराश है और खुद ही ज़रूरी समझने का इलज़ाम भी लगाते हैं। तो अब खुद अपने क़ौल से मौलाना ततहीर जाहल, नादान और बोहतान तराश हुए या नहीं?

उलझा है पांव या रूका ज़ुल्फ़े दराज़ में
लो आप अपने दाम में सियाद आ गया

इक़्तेबास नं. ३ :मौलाना ततहीर साहब ''दर्मियानी उम्मत'' के स. १६८ पर लिखते हैं कि, ''**अलबत्ता नियाज़, फ़ातेहा को कभी-कभी करते रहना चाहिए। क्योंकि यह उमूर हिन्दुस्तान में अहले सुन्नत की पहचान हैं।**''

गुज़ारिशे क़ादरी : फ़क़ीर का कहना यह है कि, उमूरे मज़कूरा यानी मरासिले अहले सुन्नत जब इस मुल्क में अहले सुन्नत की अलामत हैं। तो उनको कभी–कभी करते रहना चाहिए यह देखिए आला हज़रत सरकार क्या फ़रमाते हैं, देखिए फ़तावए रज़विया–जि. ११, स. ८७ पर कि, ''**शोआ़रे सुन्नियत का लिहाज़ ज़रूर मुवक्किद है।**'' **सिर्फ़ मुवक्किद नहीं कहा बल्कि ज़रूर लगाया।**

अब क़ारईन फ़ैस्ला करें कि, जब शोआ़रे सुन्नियत का लिहाज़ ज़रूरी हुआ और उमूरे मज़कूरा का शोआ़र अहले सुन्नियत हेना मौलाना मान चुके हैं तो हमेशा करना होगा या कभी–कभी? और इसी पर बस नहीं बल्कि देखिए फ़तावए रज़विया शरीफ़ गैर मुतर्जम–जि. ११, स. ८३ पर सरकार आला हज़रत ने अबू अमामा बाहिली का क़ौल नक़्ल किया है कि उन्होंने एक मौक़े पर फ़रमाया, ''**तुमने क़यामे रमज़ान को नया निकाला तो अब हमेशा किए जाओ, कभी ना छोड़ना।**'' एक उमदा चीज़ थी जो शोआ़र की हद तक भी ना पहुंची थी और आप शोआ़र को रोक रहे हैं।

इक़्तेबास नं. ४ : मौलाना ततहीर साहब ''दर्मियानी उम्मत'' स. ११७ पर लिखते हैं कि, ''**अल. बत्ता इतना ज़रूर है कि इन उमूर से मनअ़ करना और कभी भी इन्हें ना करना, इस मुल्क में वहाबियों की पहचान है।**''

गुज़ारिशे क़ादरी : क़ारेईन से मेरी गुज़ारिश सिर्फ़ इतनी है कि, जब इन उमूर से मनअ़ करना और इन्हें कभी ना करना इस मुल्क में वहाबियों की पहचार और इन का शोआ़र है। तो जो मनअ़ करे, उसे वहाबी कहा जाए या नहीं? यक़ीनन वहाबी कहा जाएगा। मगर मौलाना ततहरी को वहाबी कहने में कैसी वक़्त महसूस हो रही है। इस को जानने के लिए मुंदर्जाज़ैल इक़्तेबास नम्बर ५ देखिए।

इक़्तेबास नं. ५ : मौलाना ततहरी साहब ''दर्मियानी उम्मत'' के स. ११५ पर लिखते हैं कि, ''**जहां तक नियाज़ व फ़ातेहा, उर्स व बरसी वग़ै. रह का मआ़मला है तो हक़ यह है कि उन्हें ना करने वाला हरगिज़ वहाबी नहीं। हां ! जो उन्हें बुरा कहे, ग़लत बताऐ, उनसे रोके मनअ़ करे वो वाक़ई बदनसीब है। सिर्फ़ इतने पर भी काफ़िर नहीं कहा जा सकता, जब तक श्ने रिसालत में गुस्ताख़ी ना करता हो।**''

गुज़ारिशे क़ादरी : क़ारेईन ग़ौर करें ! कि जब वहाबियों की बात होती है तो मौलाना के क़लम की जो लानियत ख़त्म हो जाती है। जब उमूरे मज़कूरा से रोकना शोआ़र व वहाबियत है। इस को खुद मा. ैलाना लिख चुके। फिर जो रोकता है, उसको बदनस. ीब कहने में मौलाना के क़लम की गर्मी और जो लानियत सब ख़त्म हो गई। हां ! जब सुन्नियों की बात होती है, बुज़ुर्गों के उर्स की बात होती है, नियाज़ व फ़ातेहा की बात होती है, फिर वहां मौलाना का ग़म व गुस्सा देखिए, उनके क़लम की गर्मी और जो लानियत दखिए। यहां तक कह डाला कि, ''**आने वाले वक़्त में जाहिल कहें कि, जैसे हिन्दुओं के मंदिर हैं वैसे हमारे लिए मज़ार। (معاذاللہ رب العالمین) जैसे गुरूद्वारे हैं, वैसे हमारे लिए मज़ार।''** (معاذاللہ رب العالمین) सु. न्नियों को यहां तक कह दिया, **''जो नमाज़ के पाबंद नहीं, उनकी सारी इबादतें और रियाज़तें गुमराही के**

रास्ते हैं।'' (معاذاللہ رب العالمین)

क्या मैं पूछ सकता हूं कि, वहाबियों के मआमले में इतनी नर्मी और सुन्नियों की बात हो तो इतना शदीद गुस्सा और इतनी गर्मी की वजह क्या है? क्या कहीं पानी तो नहीं मर रहा है? फ़तावए रज़विया में लिखा है, ''**हर बर्तन से वही टपकता है, जो बर्तन के अन्दर होता है।**'' और इसी तरह की बातें हमने अभी तक सिर्फ़ वहाबियों के बर्तन से टपकते हुए देखी थीं। आज तक मैंने नहीं देखा कि इस तरह की बात किसी सहीउल अ़कीदा सुन्नी आ़लिम के बर्तन से टपकी हो। सिर्फ़ एक आप हैं कि, आप से जब टपकता है तो बस यही टपकता है। बताईए इस को क्या समझा जाए?

आ़ला हज़रत कुद्दसिर्रहु के कुछ फ़तावे : अब मैं आपके सामने आ़ला हज़रत के कुछ फ़तावे नक़्ल करता हूं, जिनको पढ़ कर देखें कि, आ़ला हज़रत ने गुमराह, बद्दीन कहा या नहीं? और मौलाना के अंदाज़े तहरीर और आ़ला हज़रत के अंदाज़े तहरीर में कितना फ़र्क़ है।

यह लीजिए फ़तावए रज़विया ग़ैर मुर्तजम–जि. ११, स. ५२ पर एक सवाल के जवाब में सरकार आ़ला हज़रत कुद्दसिर्रहु फ़रमाते हैं कि, ''**इस दयार में मीलाद ख़्वानी व ज़ियरते कुबूर व फ़ातेहा और तस्बीह व तहलील के मुंकिर सिर्फ़ वहाबिया हैं।**'' फिर लिखते हैं कि, ''**इंकारे उमूरे मज़कूरा शोआ़रे वहाबियह अस्त।**'' क़ारेईन देखिए ! आ़ला हज़रत के जुम्ले को कि, इस दयार में उमूरे मज़कूरा के मुंकिर सिर्फ़ वहाबियह हैं तो अब जो उमूरे मज़कूरा का इंकार करेगा, उसे बदनसीब नहीं, वहाबी कहा जाएगा।

आ़ला हज़रत का दूसरा फ़तवा : और यह लीजिए फ़तावए रज़विया ग़ैर मुर्तजिम–जि. न. ६, स. १७० पर आ़ला हज़रत एक सवाल के जवाब में फ़रमाते हैं कि, ''**नियाज़ व नज़र करना जाईज़ है और औलिया से तलबे दुआ़ मुस्तहिब और यहां इन मसाईल में कलाम करने वाले नहीं, मगर वहाबी और वहाबी मुर्तद हैं और मुर्तद के पीछे नमाज़ बातिल महज़ है। जैसे गंगा परसाद के पीछे।**''

गुज़ारिशे क़ादरी : क़ारईन ! आ़ला हज़रत के अंदाज़े तहरीर को देखें कि यहां इन मसाईल में कलाम करने वाले सिर्फ़ वहाबी हैं और वहाबी मुर्तद हैं।

मौलाना ततहीर के मुताबिक़ आ़ला हज़रत को कहना चाहिए कि, ''वो बदनसीब है और सिर्फ़ इतने पर वहाबी नहीं कहा जा सकता। जब तक शाने रिसालत में गुस्ताख़ी ना करे।'' देखिए कितना फ़र्क़ है, आ़ला हज़रत की तहरीर में और मौलवी ततहीर की तहरीर में। बल्कि आ़ला हज़रत ने सिर्फ़ उमूरे मज़कूरा के इंकार को शाआ़रे वहाबियत और वहाबियों को मुर्तद होने का हुक्म दिया।

मैं कहता हूं, अगर मौलवी साहब सरकार आ़ला हज़रत का तरीक़ा अपनाते और यूं लिखते कि, ''जो इन उमूर का इंकार करे, वो वहाबी है और वहाबिया मुर्तद हैं, गुमराह, बद्दीन हैं, तो कितना अच्छा होता।'' अब आ़ला हज़रत को दखिए, क्या लिखते हैं, यह लीजिए फ़तावए रज़विया गैर मुर्तजिम–जि. नं. ११, स. ७३, सरकार आ़ला हज़रत फ़रमाते हैं, ''**हां ! बिलफ़र्ज़ अगर कोई शख़्स ऐसा हो कि, वहाबियत व वहाबिया से जुदा हो, वहाबिया को गुमराह व बद्दीन समझता हो, देवबंदिया को कुफ़्फ़ार व मुर्तदीन जानता हो, सिर्फ़ क़ियाम व उर्स में कलाम रखता हो तो महज़ इस वजह पर उसे सुन्नियत से व हंफ़ियत से ख़ारिज ना कहा जाएगा। मगर आज कल यह फ़र्ज़े अज़क़बील, फ़र्ज़े बातिल है। आज वो कौन है कि इन में कलाम करे और हो सुन्नी?**''

गुज़ारिशे क़ादरी : मौलाना ततहीर साहब ग़ौर से देखिए आ़ला हज़रत सरकार के जुम्लों को बिलखुसूस आख़िरी जुम्ले को कि, ''**आज कल यह फ़र्ज़े अज़क़बील फ़र्ज़े बातिल है।**'' कुछ समझे आप? यानी ऊपर जो हमारा मफ़रूज़ था कि, अगर कोई शख़्स ऐसा हो कि जो वहाबिया से जुदा हो, उन को

कुफ़्फ़ार मुर्तदीन समझता हो और सिर्फ़ क़ियाम व उर्स में कलाम रखता हो, यह फ़र्ज़े अज़क़बील फ़र्ज़े बातिल है। तो जो इस मफ़रूज़ा से हुक्म और नतीजा निकला कि, सुन्नियत से ख़ारिज ना कहा जाएगा। वो खुदबखुद बातिल हो गया। अगर मुंतिक़ व फ़लसफ़ा से कुछ वाक़फ़ियत होगी तो जानते होंगे कि, जो मुस्तलज़िम बातिल हो, वो खुद बातिल होता है। लेहाज़ा साबित हो गया कि, उमूरे मज़कूरा के मुंकिर का सुन्नी होना ही बातिल है।

मौलाना ततहीर ! अब अपने बचाओ का रास्ता तलाश करो। कहां गया वो आप का क़ौल कि, ''सिर्फ़ इतने पर वहाबी नहीं कहा जा सकता।'' यही वजह है कि आला हज़रत ने फरमाया, ''**आज वो कौन है, जो इन में कलाम करे और हो सुन्नी?**'' यह आला हज़रत का आख़िरी जुम्ला है। मौलाना बतईए, इस जुम्ले में इस्तफ़हाम कौन सा है? हमसे सुनिए ! यह इस्तफ़हाम इंकारी है यानी आज ऐसा कोई नहीं जो इन उमेर में कलाम करे और सुन्नी भी हो। मतलब इन उमूर में कलाम करने वाला वहाबी और जब वहाबी तो मुसलमान कैसे? सुनिए अगर माकूल से कुछ दिलचस्पी होगी तो जानते होंगे कि, जब शए की नफ़ी होती है तो ज़िद का इस्बात होता है। मुतालआ फ़रमाईए फ़तावए रज़विया गैर मुर्तजिम–जि. ११, स. १२८ पर आला हज़रत ने भी इस को लिखा है, ''**दिन नही ंतो रात, रात नही ंतो दिन।**' शए की नफ़ी ज़िद का सुबूत है।

इक़्तेबास नं. ६ : मौलाना ततहीर साहब दर्मियानी उम्मत, के स. ११८ पर लिखते हैं कि, ''**इस में कोई शक नहीं कि, बातिल फ़िर्क़ो ख़ास कर वहाबियों और देवबंदियों का रद व अबताल ज़रूरी है। लेकिन इस में भी कोई शक नहीं कि, आज हमारी जमाअ़त में एक ऐसे मुक़र्रेरीन व मुनाज़िरीन भी काफ़ी हैं कि अगर सब बदमज़हब कहीं चले जाएं या मर जाए या सब सुन्नी हो जाए तो उन्हें बजाए खुशी के अफ़सोस होगा।** (معاذاللہ رب العالمین)

गुज़ारिशे क़ादरी : सब से पहले आप मौलाना का जुम्ला देखें, ''एक ऐसा मुक़र्रेरीन, एक भी है और मुक़र्रेरीन भी यानी कुल्लीयत व जुज़ीय्यत का इज्तेमाअ़।'' अफ़सोस ! मौलाना साहब ने बदगुमानी की इंतेहा करदी। मौलाना ! लोग आप को आ़लिम और मुत्तक़ी कहते हैं। क्या इसी का नाम इल्म है? क्या इसी को तक़वा कहते हैं? क्या सरकार की यही तालीम है? क्या इस्लाम ने यही सिखाया है? क़ारईन ! दिल पर हाथ रख कर सोचें कि, क्या यह हसद आर बदगुमानी नहीं है? कि अगर सब बदमज़हब सुन्नी हो जाएं तो उन्हें अफ़सोस होगा?(معاذاللہ،اناللہ واناالیہ راجعون)

मैं आपसे तफ़सीली बहस तो अभी कर रहा हूं। लेकिन पहले फ़तावए रज़विया शरीफ़ से एक बुज़ुर्ग का क़ौल दिखा दूं, तो यह लीजिए फ़तावए रज़विया ग़ैर मुर्तजिम–जि. १२, स. ६६ पर आ़ला हज़रत आ़रिफ़ बिल्लाह सैय्यदी अहमद ज़रूक का क़ौल नक़्ल फ़रमाते हैं कि, ''**ख़बीस गुमान ख़बीस ही दिल से पैदा होता है। पूरे जिस्म का राजा दिल है। जो वही ख़बीस हो गया तो फिर आपसे और क्या शिकायत करूं।**''

तफ़्सीली बहस : معاذاللہ इतनी ज़बर्दस्त बदगुमानी। मैं कहता हूं वो मुक़र्रेरीन व मुनाज़िरीन जिन को बदमज़हबों का इस्लाम लाना नहीं बल्कि कुफ़्र ही में रहना पसंद है। बक़ौल आपके, उनके ईमान के बारे में क्या हुक्म है? क्या उनके ईमान की ख़ैर रह जाएगी? सच कहा है कि, ''हर बर्तन से वो टपकता है, जो उस में होता है, जो जैसा होता है उसकी सोच, उसके तसव्वुरात, उसके एहसासात भी वैसे होते हैं।''

क़ारईन तवज्जोह दें ! अगर मैं मौलाना का दफ़ाअ़ करेत हुए यूं कहूं कि, अगर सारे बे नमाज़ी, नमाज़ी बन जाएं तो मौलाना को खुशी होने के बजाए अफ़सोस होगा। इस लिए कि अब मौलान की तक़रीरों और किताबों की दुकान कैसे चलेगी। क़ारईन बताएं ! कि मेरी यह सोच ग़लत है या नहीं? तो जवाब होगा,

यक़ीनन ग़लत है। معاذاللہ हम इस तरह की सोच नहीं रखते। सिर्फ़ समझाने के लिए हमने मिसाल पेश की है।

मौलाना ततहीर साहब ! आपको कुछ लोग ग़लत फ़हमी की बिना पर मुत्तक़ी की नज़र से देखते हैं। कम अज़ कम इस का ख़्याल तो किया होता और इस तरह बदगुमानी करने से पहले फ़रामीने आ़ला हज़रत देख लेते।

यह देखिए फ़तावए रजविया गैर मुर्तजिम–जि. नं. ६, स. ४११ पर सरकार आ़ला हज़रत फ़रमाते हैं कि, ''**बदगुमानी, मुसलमानों पर सख़्त हराम है।**''

एक सवाल : मौलाना ख़ुशी होना या अफ़सा.स होना, यह अ़मल क़ल्ब है और क़ल्ब पर इतल्लाअ़ अल्लाह ﷻ को और उसकी अ़ता से उसके महबूबों को। फिर आपने कैसे जान लिया कि, ख़ुशी होगी या अफ़सोस होगा? वो भी इस्तक़बाल में। देखिए सरकारे दो आ़लम ﷺ क्या फ़रमाते हैं हदीसे पाक में, ''तूने इस का दिल चीर कर क्यों ना देखा।'' यह लीजिए कुरआने पाक में अल्लाह ﷻ फ़रमाता है, ''**ऐ ईमान वालो ! बहुत से गुमानों से बचो। बेशक गुमान गुनाह हैं।**'' और हदीस शरीफ़ में है, ''**गुमान से बचो कि गुमान सब से बढ़ कर झूटी बात है।**''

इक़्तेबास नं. ७ : मौलाना ततहीर साहब ''दर्मियानी उम्मत'' के स. १४२ पर लिखते हैं कि, ''**यहां यह बता इन दीना ज़री है कि आज कल जो पीरी मुरीदी राईज है, बैते तबर्रूक है। कोई हुक्मे शरई नहीं, फ़र्ज़, वाजिब नहीं। अगर कोई शख़्स किसी ख़ास पीर का मुरीद ना हो लेकिन अ़क़ीदा दरूस्त रखता हो तो हरगिज़-हरगिज़ गुनाहगार नहीं।**''

गुज़ारिशे क़ादरी : इस तरह की इबारत पर गुफ़्तगू फ़क़ीर क़िस्ते अव्वल में भी कर चुका है। आ.ख़िर इस बात को इस तरह भी तो कह सकते थे कि, ''मुरीद होना फ़र्ज़ व वाजिब नहीं। इस लिए अगर कोई किसी ख़ास पीर से मुरीद ना हो ले किन अ़क़ाईद दुरूस्त रखता हो तो गुंहगार नहीं। मगर मुरीद हेना सुन्नत और इसके फ़वाईद कसीर हैं। इस लिए किसी अच्छा बाशरअ़ जामेअ़ शराईत सुन्नी सहीउलअ़क़ीदा आ़लिम (यानी फ़क़ीह), बाअ़मल (यानी मुत्बएशरअ़), मुतस्सिलुल सिलसिला पीर देख कर मुरीद हों।''

अब क़ारईन बताईए कि इस में मुस्तबत पहलू ग़ालिब है या नहीं? और यही सबक़ आ़ला हज़रत ने दिया है। यह देखिए फ़तावए रज़विया ग़ैर मुर्तजिम–जि. नं. १२, स. १६६ पर एक सवाल है कि, ''मुरीद होना सुन्न्त है या वाजिब? मुरीद क्यों होते हैं? इस के फ़वाईद क्या हैं?''

आ़ला हज़रत कुद्दसिर्रहु ने जवाब में फ़रमाया, ''**मुरीद होना सुन्नत है और इस से फ़ाएदा सरकारे दो आ़लम ﷺ से इत्साले मुसलसिल।'' तफ़्सीरे अ़ज़ीज़ी देखो। यहां तक फरमाया गया, ''जिसका कोई पीर नहीं उसका पीर शैतान है।**'' सेहते अ़क़ीदत के साथ सिलसिला सहीया मुस्सला में अगर इंतेसाब बाक़ी रहा तो नज़र वाले इसके बरकात अभी देखते हैं। जिन्हें नज़र नहीं वा नज़अ़ में, क़ब्र में, हश्र में देखेंगे। मौलाना बताईए ! आपने जो लिखा है, इससे क्या पैग़ाम जाएगा? क्या दोनों से एक ही पैग़ाम जाता है? बिल्कुल नहीं ! आ़ला हज़रत की तहरीर में मुस्बित पहलू ग़ालिब है और आपकी तहरीर में मंफ़ी और बेअदबी का पहलू अग़लब है।

इक़्तेबास नं. ८ : मौलाना ततहीर साहब ''आओ दीन पर चलें'' के स. ३३ पर लिखते हैं कि, ''**जो लोग नमाज़, राज़े की पाबंदी नहीं करते, उनके सारे वज़ीफ़े, इबादतें और रियाज़तें सब मरदूद और नाक़ाबिले कुबूल हैं। ग़ैर इस्लामनी काम हैं और गुमराही के रास्ते हैं।**'' معاذاللہ

गुज़ारिशे क़ादरी : शरहे अ़क़ाईद–स. ६० पर है कि, ''**ईमान, तस्दीक़ नबीए पाक ﷺ का नाम है और कुफ़्र।**''

ज़रूरियाते दीन का इंकार कुफ़्र है और ज़रूरियाते मज़हबे अहले सुन्नत के इंकार का नाम गुमराही है।

अब मौलाना बताईए कि, जो लोग नमाज़, रोज़े के पाबंद नहीं और दिगर माली इबादतें या वज़ीफ़े कर लेते हैं तो उनका कुबूल ना होना और बात है और गुमराही का रास्ता होना और बात है। उनके इन सब नेक कामों के कर लेने से आने वाले वक़्त में कौन सी ज़रूरियाते मज़हबे अहले सुन्नत का इंकार होने वाला है। जिसकी बुनियाद पर आपने कह दिया कि, "यह गुमराही के रास्ते हैं।" जिस की ख़ब सिर्फ़ आपको है और किसी को नहीं है। गुमराही का रास्ता और किसी आ़लिम ने नहीं लिखा, सिर्फ़ आपने लिखा। यह देखिए फ़तावए रज़विया ृारीफ़ गैर मुर्तजिम–जि. ६, स. १५५ पर एक सवाल है कि, ईमाम ने अपनी तक़रीर में कहा कि, "**जोशख़्स नमाज़ नहीं पढ़ता और मीलाद पढ़वाता है वो जहन्नमी है। तो क्या मीलाद पढ़वाने वाला जहन्नमी है?**" معاذالله

आ़ला हज़रत ने जवाब में फ़रमाया, "**नमाज़ ना पढ़ना सख़्त कबीरा है। मगर इसके जहन्नमी होने पर यक़ीन नहीं किया जा सकता कि कुफ़्र के सिवा सब गुनाह ज़ेरे मुशीत हैं और मीलाद पढ़वाने पर अगर जहन्नमी कहे तो खुद जहन्नमी है।**" معاذالله

मौलाना ! बक़ौल आपके, "**आला हज़रत को कहना चाहिए था कि, नमाज़ नहीं पढ़ता और मीलाद पढ़वाता है तो उसकी सारी इबादत गुमराही का रास्ता है।**" मगर नहीं ! आ़ला हज़रत ने फ़रमाया कि, "**अगर नमाज़ ना पढ़ने की वजह से जहन्नमी कहा, तब भी ग़लत है और अगर मीलाद पढ़वाने की वजह से कहा तो खुद जहन्नमी है।**"

नाम निहाद मौलवी ततहीर वहाबी, जिसने अपनी किताब "ईमाम और मुक़्तदी" के स. ६५ पर लिखा है, "**वहाबी लफ़्ज़ ग़लत नहीं है।**" के अफ़्कार व नज़रियाते शैतानिया, शनीआ़, ख़बीसा मिस्लन शोआ़रे सुन्नियत को मिटाना, अ़व्वाम के अंदर से बुज़ुर्गों की अ़क़ीदत व मुहब्बत ख़त्म करना और जाबजा मुस्तह. बात व सुनन को ग़ैर ज़रूरी क़रार देना और औलियाए किराम की दरगाहों को मंदीरों से तशबीह देकर सुन्नी मुसलमानों को معاذالله मुश्रिक जैसा बताना, उलमाए हक़ के फ़तवों का मज़ाक़ उड़ाना, उनकी हक़ बयानी को ना पसंद करना, वहाबियों की तौहीन को बुरा मानना जैसे ख़्यालाते ृौतानी पर सैय्यदी आ़ला हज़रत के वालिदे माजिद ख़ातिमुल मुहक़्क़ेक़ीन क़ुद्दसिर्रहु के ख़ंजरे बातिले कुश की एक और ज़रब कारी मुलाहिज़ा कीजिए, शरीअ़ते मुतहरा का वो कुल्लीया जो सरकारे ख़ातिमुल मोहक़्क़ेक़ीन रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो ने हर सुन्नी सहीउल अ़क़ीदा को हथियार के तौर पर अ़ता फ़रमाया।

वाजिब व फ़र्ज़ के अ़लावा कामों को फ़र्ज़ व वाजिब ना जानते हुए करते रहना और इस पर मुद्दा व मत इख़्तेयार करना निहायत महमूद बल्कि मतलूबे फ़ीशरअ़ है। लेहाज़ा बुख़ारी शरीफ़ वग़ैरह सिहाह में इस की तरग़ीब वारिद और हुज़ूरे अकरम ﷺ ने इल्तेज़ाम के बाद तर्क कर देने को मना फ़रमाया और ईमाम बुख़ारी अलैहिर्रहमा ने ख़ास इस सिलसिले में बाब वाज़ेअ़ किया। यानी पसंदीदा आ़माल में अल्लाह तआ़ला का पसंदीदा अ़मल वो है, जिस पर मुद्दा व मत की जाए और हमेशा पाबंदी से उस पर अ़मल रहे। इस क़ाएदे की रौ से महफ़िले मीलाद, फ़तेहा और दुरूद व सलाम वग़ैरह का इल्तेज़ाम जाईज़ व मुस्तहसिन है जो लोग इस पर अ़मल पैरा हैं, उन के बारे में यह समझ लेना कि वो वाजिबजानते हैं ग़लत फ़हमी और सौए ज़न है और यह सरासर ख़िलाफ़े शरअ़ है।

Add:- Monthly Sunni Awaz Hindi
old Bhandar Road, Ganjakhet
Nagpur-440018. (M.S)
Contct: 09561080392
mail@sunniawaz.com

पंन्दरवी सदी का एक अज़ीम फितना

नाम निहाद दावते इसलामी

सून्नीयो ! अमान के लूटेरौ को पहचाने और होशियार रहो!

अज़ : मोहाम्मद यूसूफ मिर्ज़ा नक़्शबंन्दी,चित्तौड गड, राजिस्थान

اعوذباللہ من الشیطن الرجیم. بسم اللہ الرحمٰن الرحیم

الحمد للہ رب العٰلمین والصلوٰۃ والسلام علیٰ رسولہ الکریم وعلیٰ اٰلہٖ واصحابہٖ وابنہ الغوث الاعظم وعلیٰ معین الاعظم وعلیٰ الامام الاھلسنت اعلیٰ حضرت وعلیٰ مظھراعلیٰ حضرت وعلیٰ مرشدنا الاعظم جل جلالہ وصلی اللہ تعالیٰ علیہ وعلیٰ اٰلہٖ وسلم ورضوان اللہ تعالیٰ علیھم اجمعین ۔

दौरे हाज़िर में आने वाली जमाअतें और तंज़ीम. ें, सिसे अहले सुन्नत व जमाअत शदीद इंतेशार का शिकार हैं और कुछ लोगों का कहना है कि, "**यह सारे अफ़राद व तंज़ीमें मस्लके आला हज़रत का काम कर रही हैं। लेकिन उलमा उनको दीन का काम करने नहीं दे रहे हैं।**"

इस सिलसिले में कुछ अहम गुज़ारिशित अपने अहबाबे बहले सुन्नत, ख़ुसूसन ख़्वाजा ताशाने रज़वियत के लिए तहरीर की जा रही हैं कि, "**वो इस को पढ़ कर इंसाफ़ से फ़ैस्ला करें कि कौन सही स्ता पर है और कौन ग़लती पर है?**" यह हक़ीक़त जानने के लिए आपको माज़ी की तरफ़ ले जाता हूं कि, एक तंज़ीम जिसने अपना मोनोग्राम आला हज़रत को बनाया जो दावते इस्लामी के नाम से वजूद में अई। इस तंज़ीम का हेडक्वार्टर पाकिस्तान में है। अपने दौराने क़ियाम के साथ ही इस तंज़ीम ने हिन्दुस्तान में भी अपनीशख़ें क़ायम कीं जिससे सब ही वाक़िफ़ हैं।

माज़ी क़रीब में जब नाम निहाद दावते इस्ल. ामी ने हिन्दुस्तान की सरज़मीन पर अपने क़दमों को रखा तो उलमाए अहले सुन्नत ने इसकी ज़ाहिरी अफ़ा. दियत के पेशेनज़र इस का ख़ैरे मक़दम किया और इसको सरहा। ग़ौरे तलब बात यह है कि इस तंज़ीम की हौस्ला अफ़ज़ाई के पेशे नज़र उलमाए किराम ने आलिम होने के बावजूद जोहला को दर्स के लिए खड़ा किया। आलिम होने के बावजूद इन के मुबल्लीग़ीन का दर्स सुनना और अपने मुक़्तदियों को सुन्ने की तलक़ीन की। ख़ानक़ाहों के ज़िम्मादारों ने भी इनको अपने क़रीब में जगह दी। उलमाए किराम का यह अमल ख़ालेसतन नेक नीय्यती पर मंबी था कि इस तंज़ीम के ज़िम्मादा. रों की हौस्ला अफ़ज़ाई हो और इस्लाम व सन्नियत की नश्र व इशाअत ज़्यादा से ज़्यादा हो और आदाए दीन खुसूसन वहाबियों-देवबंदियों के फ़रेब कारियों से क़ौम व मिल्लत को महफ़ूज़ किया जा सके। उलमाए किराम के इस बेलौस तआवून और उनके साथ चलने का यह नतीजा निकला कि दावते इस्लामी निहायत तेजअ रफ़्तारी के साथ तरक़्क़ी की मंज़िलें तैय करने लगी। उलमाए किराम ने भी इत्मेनान की सांस ली कि, वहाबियों-देवबंदियों की तंज़ीमें जैसे तबलीग़ी जमाअत व जमाअते इस्लामी का बदल हो गया। अभी यह सोच पूरी तरीक़े से पायदार भी ना हो पाई थी। अभी यह सीले रवां पहने भी ना पाया था कि हालात ने करवट बदली और दावते इस्लामी जो कि तबलीग़ी जमाअत वग़ैरह के मुक़ाबिल आई थी और अपना मोनोग्राम आला हज़रत के नाम को बनाया था। आगे चल कर यह तंज़ीम निहायत खुफ़िया अंदाज़ में राहे आला हज़रत से हटने लगी। देखना यह है कि जो तंज़ीम अपने लिटरेचर्स अपनी किताबों में क़दम-क़दम पर आला हज़रत का नाम लेते नहीं थकती।

आला हज़रत क़ुद्दसिर्रहु के इश्क़ का ज़ोरदार दावा करती है। इस तंज़ीम के बारे में यह कैसे गुमान किया जा सकता है कि, वो तंज़ीम मस्लके आला हज़रत की हामी और मुबल्लिग़ नहीं। वो तंज़ीम क्यों कर आला हज़रत के मिशन से दूर हो जाएगी? लेकिन यह भी एक तल्ख़ हक़ीक़त है कि, इश्क़ छुपाए नहीं छुपता। हम देखते हैं कि, यही तंज़ीम आगे चल कर आला हज़रत की तहरीरों से रूगिरदानी करती हुई नज़र आती है। मिस्लन इस तंज़ीम ने अपना बायलॉज़ बनाया, जिसमें सब से ख़तरनाक और मोहलक तरीन तरीक़ाकार अपने इस्टेज से रद्दे वहाबियत से इंकार को बनाया। अहले सुन्नत के अहम और अज़ीमशुआरे महफ़िले मीलादुन्नबी ﷺ का अपने इस्टेज से ना होने का ऐलान या रस. ूलुल्लाह ﷺ के नारे से परहेज़ का हुक्म वग़ैरह-वग़ै. रह। दावते इस्लामी के इस रवय्ये का रिअक्शन यह

हुआ कि, दावते इस्लामी में ही दोफाट हो गए। जब यह तंज़ीम दो हिस्सों में तक़सीम हो गई तो एक हिस्से ने अपने नाम के साथ लफ़्ज़ "**सुन्नी**" का इज़ाफ़ा किया। "**सुन्नी दावते इस्लामी**" नाम रखा और सफ़ेद अ़मामा को अपनी पहचान बनाया। क़ारईन ! ग़ौर फ़रमाएं कि, "सुन्नी" की क़ैद का इज़ाफ़ा ही इस बात का ऐलान है कि, इन के नज़दीक दावते इस्लामी वाले ग़ैर सुन्नी हो गए। लेकिन आगे चल कर इन दोनों तंज़ीमों का अंदाज़े फ़िक्र एक हो गया। फिर क्या था, यह दोनों तंज़ीमें अपने–अपने ज़ाती मफ़ाद के लिए आपस में ही लड़ने–भिड़ने लगीं। फिर क्या नतीजा निकला? यही कि जिस का जहां ज़ोर चला, उसने उस मुहल्ले की मस्जिद, क़स्बा, देहात, परगुनह, ज़िला पर अपना क़बज़ा किया। अपनी जमाअ़त का मरकज़ बनाया। फिर यह दोनों तंज़ीमें अपनी–अपनी ताक़त मज़बूत करने में लग गई। इस मक़सद को हासिल करने के लिए अपने–अप. ने अमीरों के मुरीद बढ़ाने का काम बड़े ज़ोरोशोर से शुरू हो गया। इस उठा–पटक का रिज़ल्ट यह निकला कि, जो तंज़ीम वहाबियों व मौदूदी की नाम निहाद तबलीग़ी जमाअ़त व जमाअ़ते इस्लामी से मुक़ाबला करने के नाम पर। आ़ला हज़रत के इश्क और आ़ला हज़रत के नाम के मोनोग्राम का सहारा ले कर वजूद में आई थी। अब वो तंज़ीम सुन्नियों से ही लड़ने–मरने में सारा वक़्त सर्फ़ करने लगी। फ़िक्रे दीन से ज़्यादा फ़िक्रे दुनिया, अ़मले ख़ालिस के बजाए दिखावा और रियाकारी उन जमाअ़तों का शेवा और दस्तूर हो गया। हाल तो यहां तक हो गया कि, अपने मानने वालों को ज़हन देनाशुरू किया कि, معاذالله उलमा ना दीन का काम कर रहे हैं, ना करने दे रहे हैं। यही जमाअ़तें मस्लके आ़ला हज़रत का काम कर रही हैं।

फिर क्या था, इन खुदसाख़्ता अमीरों के मानने वाले इन के अंधे मुक़ल्लिद हो गए। जो इनके अमीर कहें, वही शरीअ़त, जो मना करें, वही ख़िलाफ़े शरीअ़त। इसकी बहुत सारी मिसालें मौजूद हैं। जैसा कि नाम निहाद दावते इस्लामी, आ़ला हज़रत के इश्क़ का नारा लगाने वाली ने टी.वी. को बड़ीशद्दो–मद के साथ हराम किया और कई किताबें टी.वी. के रद में छपवा कर हज़ारों की तादाद में बटवाई। इन लिटरेचर में इस बात को बहुत ज़्यादा आ़म किया गया कि, "**टी.वी. सरकार ﷺ का दुश्मन है।**" टी.वी. के रद के बारे में कई ख़्वाब अपने लिटरेचर में शाए की गई। टी.वी. से नफ़रत दिलाने और इससे परहेज़ व इज्तेनाब करने के लिए निहायत शिद्दत से तहरीक चलाई गई। इस के नतीजे में इस तंज़ीम वालों के बक़ौल अपने अमीर का हुक्म सुनते ही इसके मानने वालों ने टी.वी. को चौराहों पर जलवाया।

लेकिन अभी ज़्यादा अ़र्सा ना गुज़रने पाया था कि, जिस टी.वी. के बारे में इन जमाअ़तों वालों का ऐलान था कि, "**टी.वी. सरकार ﷺ का दुश्मन है।**" जिस टी.वी. से नफ़रत और इज्तेनाब और परहेज़ करने के बारे में निहायत शद्दो–मद से तहरीक चलाई गई। अब इसी टी.वी. के बारे में इस तंज़ीम के तंख़्वाह दराज़ और प्राईवेट मुफ़्तीयों के ज़रिए इसी टी.वी. के लिए जवाज़ के ग़ैर शरई हीले तलाश किए जाने लगे और जवाज़ का हुक्म सादिर कर दिया गया। ना सिर्फ़ जवाज़ बल्कि टी.वी. देखने को कारे सवाब तक क़रार दिया गया। यह बात सिर्फ़ ज़बानी जमा ख़र्च वाली नहीं है। बल्कि इसका सुबूत इनके लिटरेचर में मौजूद है। बहरहाल! अब इसी दुश्मने सरकार ﷺ को घर और मसाजिद की ज़ीनत बना लिया गया। معاذالله और इसके देखने–दिखाने को बाअ़से अज्र व सवाब कह डाला। यहां तक कि इस हराम को मदीना तैय्यबा से निस्बत देते हुए "**मदनी चैनल**" नाम रख डाला। इस क़िस्म के ऐलानों और स्टीकरों से इस की तशहीर की गई कि, "**जिसको मदनी चैनल से प्यार है, उसका बेड़ा पार है।**" वग़ैरह–वग़ैरह। यहां तक कि तर्जुमए क़ुरआन "**कंज़ुलईमान शरीफ़**" को उन्होंने जिसको अपने मकतब से शाए किया, उसके बैक पीज पर उस हराम का ऐड और उसको देखने की तशहीर की गई। معاذالله

मगर मस्लके आ़ला हज़रत को माने का दावा करने वाली दावते (ग़ैर) इस्लामी के अमीर और इसके तंख़्वाहदार, प्राईवेट मुफ़्तीयों ने यह ना बताया कि, टी.वी. के जवाज़ के बारे में कौन सा हुक्म नासिख़ है? कहां से आया? कहीं ऐसा तो नहीं, मिर्ज़ाए क़ादयानी की तरह معاذالله इसके जवाज़ का हुक्म अमीर के ऊपर इल्हाम हुआ हो? इस शैतानी ख़्याल के पसे–पर्दा आगे चल कर निहायत खुफ़िया अंदाज़ में معاذالله नबूवत के लिए रास्ता हमवार किया जा रहा हो?(استغفر الله ثم استغفر الله) अल्लाह तआ़ला ऐसे मकारों कज़्ज़ाबों की साज़िशों और फ़रेबों से हम सब सुन्नियों को महफ़ूज़ फ़रमाए। آمین !

अब इन सब हालात और इस जमाअ़त की बतिनी ख़बासतों के पेश नज़र उलमाए हक़ और इस्लाम व सन्नियत का हक़ीक़ी दर्द रखने वालों ने जब देखा कि, इनके दांत खाने के और दिखने के और। तो फिर ग़ैबी लश्करे अबाबील का इंतेज़ार करने लगे और फिर उलमाए अहले सून्नत ने अ़व्वाम अहले सुन्नत को अगह

करना शुरू कर दिया। इनके ख़तरनाक अ़ज़ाईम और सज़िशों का पर्दा चाक करना शुरू किया। कितने ही लिटरेचर और किताबें इस सिलसिले में मंसएशहूद पर आएं। फिर क्या हुआ, वो भी आपको मालूम है। कहीं ईमाम पर हमला, कहीं उलमा की तौहीन, कहीं हूफ़्फ़ाज़ को गुंडागर्दी के ज़रिए ज़दो कोब करके दबाने की कोशिश की गई, कहीं सरमाए के ज़रिए बहुत से नाम निहाद मौलवियों, ईमामों, मुफ़्तीयों की ख़रीद व फ़रोख़्त, कहीं जलसे का लालच, कहीं ग़ैर मुल्कों की दुहाई दे कर दबाने की कोशिश।

लेकिन सच कहा मेरे आक़ा ﷺ ने कि, "**हर दौर में मेरी उम्मत में एक गिरोह उलमा का मौजूद रहेगा। जो हक़ को हक़, बातिल को बातिल कहता रहेगा।**" इस का जलवा दिखाई देने लगा। फिर क्या था, उनमाए हक़ ने अपनी तहरीरों, तक़रीरों के ज़रिए इसका शद्दो-मद के साथ रद और हर मोड़ पर उन का तआ़क़ुब करना शुरू कर दिया। उनकी आज़ाद ख़्याली और गुमराहकुन नज़रियात से अहले सुन्नत व जमाअ़त को ख़बरदार किया। जिसका नतीजा यह हुआ कि, काफ़ी हद तक दावतियों का ख़ातमा हो गया और अ़व्वामे अहले सुन्नत उनके फ़ितनों से बाख़बर हो गए। الحمدللہ رب العالمین उनकी ख़राबियों और गुमराह. कुन नज़रियात के बयान से पहले बतौर तमहीद चन्द कलमात और कहना चाहता हूं कि, "**इन जमाअ़त वालों का हाल तो यह हो गया है कि, अपने अमीर के ज़ाती मफ़ादात की फ़िक्र में सरगर्द रहना इन का तरीक़एकार बन गया है। जो अमीर के ख़िलाफ़ कुछ कह दे, उससे लड़ाई। होना तो यह चाहिए था कि, नाम निहाद दावते इस्लामी व सुन्नी दावते इस्लामी वाले मस्लक की फ़िक्र करते हुए ग़ौर करते कि, जहां जमाअ़ते इस्लामी का ज़ोर है, वहां से दुश्मनाने मस्लके रज़ा की ताक़त व कूव्वत को कम करें, उनके फ़रेब से क़ौम व मिल्लत को आगाह करें।**"

लेकिन नहीं ! बल्कि उलटा उन बातिल जमाअ़तों से इत्तेहाद, उनके साथ खाना-पीना और सुन्नी अफ़राद पर तअ़न करना, सुन्नी उलमा पर हमले करना और सुन्नी मसाजिद पर अपना कब्ज़ा व तसल्लुत जमाना, कहीं सुन्नी अ़व्वाम को धोका देने के लिए यह कहना कि, "**इस्लाम अख़्लाक़ और नर्मी से फैला है।**" लेकिन जब उलमाए अहले सुन्नत उनकी शरई ख़राबियां बयान करें तो उनके साथ बदअख़्लाक़ी और गाली-गलोज और मार-पीट को रवा रखा जाए। क्या नहीं मालूम, नाम निहाद दावते इस्लामी वालों ने मुफ़्ती अबू दाऊद साहब को किस तरीक़े से ज़द्दोकूब किया। आज डडीजा की वादी चीख़-चीख़ कर पुकार रही है। लेकिन अफ़सोस ! आज इसको कोई पूछने वाला ही नहीं। कुछ ज़र ख़रीद मौलवी, जो उनके हाथ बिक चुके हैं, उनको यह तौहीने उलमा व मुफ़्तीयाने किराम शायद दिखाई नहीं देतें।

अफ़सोस! अख़्लाक़ कीबात करनेवाली पाकिस्तानी जमाअ़त, सुन्नियों के साथ हुस्ने अख़्लाक़ को भूल गई शायद उनके नज़दीक सुन्नी उलमा के साथ हुस्ने अख़्लाक़ रवा ही नहीं। ग़ैरों से नर्मी, जब वहाबियों की रद की बात आई तो बजाए इसके कि इसका सदेबाब किया जा, लेकिन मुबल्लीग़ीन को जाहिल कह कर मआ़मला ख़त्म करने की कोशिश। क्या सुन्नतों को ज़िन्दा करने का दावा करने वाली जमाअ़त के नज़दीक रद्दे वहाबिया करना معاذاللہ ख़िलाफ़े सुन्नत है? क्या इस जमाअ़त के नज़दीक कलमए शहादत व ज़रूरयाते दीन पर ईमान लाने से पहले सुन्नतों पर अ़मल पैरा हो जाना ही मामिन व निजात याफ़्ता होने के लिए काफ़ी है? क्या इसी का नाम तबलीग़े दीन है? معاذاللہ इस पर भी यह नारा कि, "**दोनों तहरीकें मस्लक का काम कर रही हैं।**"

यह खुदसाख़्ता अमीरे अहले दावत, जो खुद. साख़्ता हुक्म फ़रमाएं वही इन के नज़दीक معاذاللہ शरी. अ़त है? क्या नहीं मालूम शाहजहांपूर रहने वाले एक ग़रीब मअ़मर, जो हुज़ूर मुफ़्तीए आ़ज़मे हिन्द अलैहिर्रहमा के चहिते मुरीद हफ़िज़ फ़रासतुल्लाह ख़ान साहब कि. बला रज़वी के ख़ानान को कित तरीक़े से ज़द्दोकूब किया गया? आख़िर उनकी ग़लती क्या थी? बस यही कि एक जलसा करवा के उलमाए अहले हक़ को बुला कर इस नाम निहाद पाकितानी तहरीक की ख़राबियां अ़व्वामे अहले सुन्नत के सामने बयान कराई। जिस का नतीजा यह हुआ कि, शाहजहांपूर से बड़े पैमाने पर पाकिस्तानी तंज़ीम का ख़ातमा हो गया। الحمدللہ बस फिर क्या था, अख़्लाक़े हुस्ना की दुहाई देने वाली, वहाबियों के साथ दोस्ती करने वाली, सुन्नतों का नाम ले कर सुन्नियों को धोका देने वाली पाकिस्तानी तंज़ीम, आ़ला हज़रत का नारा दे कर आ़ला हज़रत को फांसने की कोशिश करने वाली, नीज़ पाकिस्तान की दीनदार नामी तहरीक से इत्तेहाद करने वाली दावते इस्लामी के मुबल्लिग़ों ने शायद उस रज़वी भाई के साथ अख़्लाक़ रवाही नहीं समझा और तअ़ज्जुब यह है कि, इश्क़े आ़ला हज़रत और पैरवीए सुन्नत का दावा बरक़रार है। लेहाज़ा क़ा. रईने किराम ! ग़ौर करें कि एक मोमिन मुसलमान को

आज़ार पहुंचाना कितना गुनाहे अ़ज़ीम है। लेकिन जो मौलवी इन के हाथों बिक चुके हैं, क्या उनको नहीं मालूम कि, उलमा की तौहीन बरबनाए दीन कुफ़्र है। नहीं बल्कि अगर उनके अमीर व दावती मौलवियों की कोई तौहीन कर दे तो फिर उनका रंग देखिए।

ख़ैर ! हमें तो अपने लोगों को उनकी मक्. कारियों के बारे में बताना है। ताकि लोग खुद फ़ैस्ला करें कि, इस जमाअ़त की बुनियाद सिर्फ़ रियाकारी, दिखावा है और मस्जिदों पर अपना तसल्लुत व अ़व्वामे अहले सुन्नत को अपना अंधा मुक़ल्लद बनाना है। यह इन की तहरीक का एक ज़बर्दस्त टारगेट और साज़िश है कि, अपने इन अ़ज़ाईम और मक़्सद में कामियाब होने के बाद बज़ाहिर जो नताईज ज़हूर पज़ीर होंगे, वो इस तरह कि अब जो यह कहेंगे, वो इस्लाम होगा और जिससे मना करें वही मुख़ालिफ़े इस्लाम ठहरेगा।

क्या किसी को इन ईमामों, मौलवियों की भी ख़बर है, जो इनके मज़ालिम से गुज़र चुके हैं? अफ़सोस ! कोई पूछने वाला है नहीं। यह कहने वाले तो मिलेंगे कि, "**क्या इनके नज़दीक यह लोग भी ठीक नहीं जो सुन्नतों को ज़िन्दा कर रहे हैं, घर-घर इस्लाम की तबलीग़ कर रहे हैं, नमाज़-रोज़ा की तलक़ीन कर रहे हैं, हज़ारों-लाखों की तादाद में इस्लाम की तबलीग़ के लिए किताबें छपवा कर शाए कर रहे हैं, जिन की ज़बानें الصلوٰۃ والسلام علیک یارسول اللہ ﷺ कहते नहीं थकती, नातों, दुरूदों, सलामों का विर्द इनके इज्तेमा और इनके लिटरेचर में भरा पड़ा है, जो आ़ला हज़्. रत के इश्क़ और मुहब्बत से सरशार है, क्या ऐसी जमाअ़त, ऐसी तहरीक, ऐसे मुबल्लिग़, ऐसे अमीर भी ठीक नहीं? क्या ऐसा मुम्किन है? अगर यह ठीक नही तो आख़िर कौन ठीक होगा?**"तो आईए ! इस को समझने के लिए माज़ी को देखना होगा। जब नाम निह. ाद जमाअ़ते इस्लामी, तबलीग़ी जमाअ़त का जनम हुआ, उस वक़्त उलमाए हक़ ने तहरीरन-तक़रीरन उस का रद फ़रमाया। उस वक़्त भी यह सवाल उठा कि, "**अल. लाह-रसूल का नाम लेने वाले, नमज़-रोज़ा की तबलीग़ करने वाले भी सही नहीं?**" तो जवाब यह था कि, "**सिर्फ़ नाम लेना ही काफ़ी नहीं, बल्कि अल्लाह ﷻ व रसूल ﷺ के बताए हुए तरीक़े पर चलना भी ज़रूरी है।" यह जमाअ़तें ज़ाहिरी ज़बान से अल्लाह ﷻ व रसूल ﷺ का नाम तो ले रही हैं, लेकिन अल्लाह ﷻ व रसूल ﷺ को गालियां देने वालों मस्लन अशरफ़ अली थानवी, ख़लील अहमद अंबेठवी को अपना मुक़्तदा व पेशवा और पीर मान रही हैं और बहुक्म कुरआने मजीद, "जो गुस्ताख़े रसूल को अपना मुक़्तदा पेशवा माने, वो मुसलमान नहीं।**" उन्होंने अपनी किताबों जैसे हिफ़्ज़ुल ईमान, बराहीने क़ातिआ़, तहज़ीरुन्नास, फ़तावए रशीदिया व दिगर किताबे वहाबिया में खुदा ﷻ व रसूल ﷺ की बारगाहों में सख़्त-सख़्त गुस्ताख़ियां, बेअदबियां, दशनाम तराज़ियां बकीं और किताबों में छापीं। कहीं सरकारे दो आ़लम ﷺ के इल्मे पाक को जानवरों औरशै. तानों से कमतर ठहराया, कहीं आपके ख़ातिमुन्नबीईन होने का इंकार, कहीं सरकार ﷺ की वुस्अ़ते इल्म का सुबूत, नस कुरआन शरीफ़ में ना होना। लेकिन शैतान की वुस्अ़ते इल्म का कुरआन से साबित होने का इक़रार बल्कि सरकार ﷺ के वुस्अ़ते इल्म का क़ाईल, उनके नज़दीद मुशरिक वग़ैरह-वग़ैरह **معاذاللہ**

लेहाज़ा उलमाए हक़ के रद का नतीजा यह हुआ कि, **الحمدللہ** भोले-भाले सुन्नी नाम निहाद जमाअ़ते इस्लामी व तबलीग़ी जमाअ़त के फ़ितनों से महफ़ूज़ हो गए। फिर क्या कोई कह सकता है कि, "उन उलमाए हक़ ने उनका रद करके ग़लती की, इतनी बड़ी अल्लाह ﷻ व रसूल ﷺ का नाम लेने वाली, घर-घर जा कर कलमा पढ़ाने वाली जमाअ़त से दूर कर दिया?" नहीं ! हरगिज़ नहीं ! बल्कि जो उन्होंने किया, वहीं हक़ था, वही सही था। वरना आज हमारी नस्लें उनके फ़ितनों से महफ़ूज़ ना होतीं। जैसा कि आज कुछ लोग कहते हैं कि, "आ़ला हज़रत का नाम लेने वाले हैं, अगर दूर कर दिया तो सब ख़राब हो जाएगे।" फिर बात वहीं आएगी यह भी धोका है कि आ़ला हज़रत का नाम अगरचे बेशक सुन्नियत की अ़लामत और पहचान है, लेकिन आ़ला हज़रत का नाम अगर दिल से होता तो आ़ला हज़रत की किताबें आपके फ़रमान से मुख़ालिफ़त नहीं हो सकती। जैसा कि आ़ला हज़रत कुद्दसिर्रहु फ़रमाते हैं। जैसा कि इन दावतियों के अ़मल से भी ज़ाहिर है। जैसे वहाबियों-देवबंदयों के साथ इत्तेहाद, जमाअ़ते इस्लामी वालों के साथ नर्मी और देव. बंदी ईमामों के पीछे नमाज़ों का पढ़ना, यह इन दावतयों के खुदसाख़्ता अमीर की शैतानी तहरीरात का नतीजा है और हाल इस मुबल्लिग़ की तरह है कि जा**لاالٰہ الا اللہ** की ज़रबें लगाने में तो कमाले खुशूअ़ व खुज़ूअ़ का ढोंग रचाए और **لاالٰہ** कहते हुए उस शैतान का कलेजा मूंह को आए। अल्लाह तआ़ला हम सब को ऐसे नाम निहाद मुबल्लिग़ीन से महफ़ूज़ फ़रमाए। **آمین**

हालांकि उलमाए अहले सुन्नत बख़ूबी वाक़िफ़ हैं कि, इस्लाह या तबलीग़ की जान रद्दोबद मज़हबां और इन पर सख़्ती है। जैसा कि इसकी अफ़ादियत पर एक

इक़्तेबास ''अल–अ़ताया अर्रज़विया अल–हशमतिया'' से नज़रे क़ारईन है, ''**रद्दे वहाबिया फ़र्ज़े आज़म है।**'' (फ़तावए रज़विया शरीफ़–जि. ६) और इन दावतियों का ख़ुदसाख़्ता अमीर, आ़ला हज़रत के इश्क़ का दिखावा करके सुन्नियों को फ़ांसने वाला अपनी तंज़ीम के मंशूर में लिखा कि, ''हमारे स्टेज से किसी बातिल फ़िरक़े का ना रद होगा ना तज़करा। सिर्फ़ इस्बाती अंदाज़ में गुफ़्तगू की जाएगी। यह कैसी खुली हुई मस्लके आ़ला हज़रत क़ुद्दसिर्रहु से बग़ावत है।

जिस वक़्त दहली में इस्माईल दहेलवी ने तूफ़ाने बदतमीज़ी फैलाया, अगर उस वक़्त उस पर कामिल सख़्ती ना की जाती तो क्या कोई आ़लिम गुमराही से महफ़ूज़ रह सकता? इसी सख़्ती का एक नतीजा यह भी ज़ाहिर हुआ कि, उस को दहली छोड़ कर भागना पड़ा।

इसके बाद जिस बदमज़हब ने सिर उठाया, अगर इस पर सख़्ती ना की जाती तो क्या मज़हबे अहले सुन्नत को नुक़्सान ना पहुंचता? अगर सर गिरोहे मुक़ल्लीदीन नज़ीर हुसैन दहेलवी पर मक्का मुअ़ज़्ज़मा में सख़्ती ना की जाती, क़ैद ना किया जाता तो क्या उस वक़्त वहां के पोशिदा ग़ैर मुक़ल्लीदीन, जो हिन्दुस्तान से वहां जा कर बस गए थे, मक्का मुअ़ज़्ज़मा छोड़ सकते थे? क्या अगर ग़ैर मुक़ल्लीदों पर सख़्ती के साथ रद ना किया जाता तो अ़व्वामे अहले इस्लाम हदीस व क़ुरआन के नाम से सख़्त धोके में ना पड़ जाते? क्या अगर नेचरियों के रद में सख़्ती ना की जाती रिसाला ''नूरूलआफ़ाक़'' व रिसाला ''इमदादुलआफ़ाक़'' व रिसाला ''ताईदुलइस्लाम'' वग़ैरहा किताब व तहरीरात की मुर्तदे कुफ़्र पीरे नेचर के रिसाले ''तहज़ीबुलअख़लाक़'' के रद में इशाअ़त ना किया जाता तो साढ़े तेरह बरस से ज़ईद का यह क़दीम सच्चा दीने इस्लाम हिन्दुस्तान में बाक़ी रह जाता? क्या अगर क़ादयानियों के रद में सख़्ती ना की जाती तो हिन्दुस्तान के कलमागोयों की अकसरियत दजल क़ादयानी की झूटी नबूवत का कलमा पढ़ती नज़र ना आती?

सुलह कुल्लीयों के नज़दीक अगर यह बातें पुरानी हो चुकी हैं तो ज़रा हुज़ूर पुर नूर आक़ाए नेअ़मत दरियाए रहमत ईमामे अहले सुन्नत मुजद्दिदे आ़ज़म फ़ाज़िले बरेलवी आ़ला हज़रत तंज़ीमुल बरकत मौलाना शाह अ़ब्दुल मुस्तफ़ा मुहम्मद अहमद रज़ा ख़ान साहब क़िबला क़ादरी बरकाती रज़िअल्लाह तआ़ला अन्हो की सवांहे मुक़द्दसा को बनज़रे इंसाफ़ देखें कि, एक तरफ़ ''शशु इमसालियों और हफ़्त ख़्वातुम'' वालों का शदीद फ़ितना उठता है। दूसरी सिम्त तफ़ज़ीलियों, चमर तौहदियों का फ़सादे अ़ज़ीम फैलता है। एक जानिब देवबंदियत व वहाबियत के तूफ़ान उठते हैं, दूसरी जानिब नदवीय्यत व नेचरियत के सैलाब आते हैं। एक सिम्त से क़ादयानियत व चकड़ालवियत की कुफ़्री घटाएं छाती हैं, दूसरी तरफ़ इरतेदाद की आंधियां ज़ोरो शोर से आती हैं। फ़ितनों की अंधेरियां घेर लेती हैं बदमज़हबों, बेदीनों की तारीकियां मुहीत हो जाती हैं। फिर जलाले इलाही ﷻ के मज़हर, जमाले मुस्तफ़वी ﷺ के मज़हर, सरकार ग़ौसियत के नाईब, ईमामे आ़ज़म के वारिस। हुज़ूर आ़ला हज़रत क़िबला रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो ने क्या किया? ख़ुदा ﷻ और रसूल ﷺ पर भरोसा करके, या रसूलुल्लाह ﷺ कह कर, लिसानी व बयानी जिहाद के इस होशरूबा मुअ़र के में वो शेरे ख़ुदा का शेरे दिलेर कूद पड़ा और अपने नेज़ए काफ़िर शिकार की क़ाहिर मार से। इस्लाम व सन्नियत के दुश्मनों के दिलों में ग़ार कर दिए, उनके क़ल्ब व जिगर के ज़ख़्म वार से पार कर दिए कि उनके हिमायतियों को चाराजोई के वार ना रहे.........

यह रज़ा के नेज़े की मार है कि अ़दू के सीने में ग़ार है
किसे चाराजोई का वार है कि यह वार–वार से पार है

आ़दाए इस्लाम व दुश्मनाने सुन्नियत ने नापाक अख़्बारों, नजस रिसालों, गंदी दो वरक़ियों, घिनौनी चादरक़यों में मलऊम प्रोपगंडे भी किए। दुश्नाम बाज़ियों, फ़हाशियों के ख़बीस मुज़ाहिरे भी कि, मुक़ातैए भी कि, धमकियां भी सुनाईं, गीदड़ भभकियां भी दिखाईं। मगर दीने इस्लाम के उस मुजद्दिदे आ़ज़म ने मरऊब हो कर किसी लालच में आगर **معاذاللہ** उन खुबसा से दोस्ताना, याराना, ब्रादराना ना मनाया। उनकी तरफ़ मुहब्बत व मउपत का हाथ ना बढ़ाया। बल्कि इस्लाम व सुन्नियत के ख़ूरशीद दरख़शां व बद्रे ताबां के आ़लम अफ़रोज़ चेहरों से ज़ुल्मत व कुफ़्र व ज़लालत के बादल हटा दिए। दुनियाए इस्लाम को ख़ुदा ﷻ व रसूल ﷺ की सच्ची इ़ज़्ज़त व अ़ज़मत, सच्ची उलफ़त व मुहब्बत के जलवे दिखा दिए। हर गुमराह बदमज़हब, हर मुर्तद व बेदीन की ज़लालात व ख़बासात के पुरख़च्चे उड़ा दिए। हर बातिल परस्त के झूटे दबदबे मिटा दिए। मुसलमानाने अहले सुन्नत को **الحب فی اللہ والبغض فی اللہ** के शराबे तहूर के छलकते साग़र पिला दिए। लाखों मुसलमानों को सुलहकुल्लियत के जहन्न्म से बचा कर इस्लाम व सुन्नियत की सिराते मुस्तक़ीम पर उनके क़दम जमा दिए। लिल्लाह इंसाफ़ ! अगर हुज़ूर आ़ला हज़रत कि.

बला रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो इन बदमज़हबों, बेदीनों के रद में क़ुरआने अ़ज़ीम व हदीस शरीफ़ की बताई हुई शिद्दत पर अ़म करना ना फ़रमाते तो आज क्या हिन्दुस्‍तान में उस साढ़े तेरहसौ बरस से ज़ाईद क़दीम सच्चे दीने इस्लाम व मज़हबे अहले सुन्नत के पते, निशान नज़र आते हैं? ولاحول ولاقوۃالاباللہالعلی العظیم

बहरहाल ! उन्हें सब हालात को मद्देनज़र रखते हुए अगर हम यह सोचते रहे कि, आ़ला हज़रत का नाम ले रहे हैं, सुन्नतों के लिए तबलीग़ में मसरूफ़ हैं। अगर इन को दूर कर दिया तो काफ़ी लोग बाग़ी और मुंहरिफ़ हो जाएंगे। तो फिर वक़्त हमारे हाथ से निकल जाऐगा। कि, आ़ला हज़रत का नाम ले कर, सुन्नतों की आड़ में वो हमारी नई नस्लों को ख़राब करते रहें। जैसा कि आज पाकिस्तान के हालात हैं कि वहां के अक्सर मदारिस व मसाजिद अहले सुन्नत व जमाअ़त इन जमाअ़तियों, वहाबियों के क़बज़े में चली गई।

इस काम के लिए पूरी प्लानिंग से काम किया जाता है कि, सब से पहले मुहल्ला के बाअसर लोगों को अपने क़रीब लाते हैं। मस्जिद के ईमामों को अपना हमनवा बनाते हैं। चाहे पैसा देकर या बदमाशों केज़रिए डरा धमका कर (जैसा कि शाहजहांपूर, धुलिया, औरंगाबाद शरीफ़ इस पर शाहिद हैं) हाथ चूम कर हज़रत हुज़ूर कर के धोका देते हैं। इस तरीक़े से अपने दर्स देने की बुनियाद डालते हैं। जब दर्स शुरू हो गया और अहले ताक़त क़रीब आगए तो फिर क़दम–बक़दम अपना तसल्लुत मज़बूत करते जाते हैं। आख़िरकार मस्जिद पर दावती झंडा लहराने लगता है। फिर इस सूरत में ईमाम के सामने दो रास्ते होते हैं। या तो अ़त्तारी बने या उनके रंग में रंग जाए या मस्जिद से इस्तफ़ा दे दें, जिसकी काफ़ी मिसालें मौजूद हैं। अपने मक़्सद को हासिल करने के लिए इन का सब से मज़बूत सहारा पैसा होता है। उलमा को नज़राने, मुबल्लीग़ीन को माहना वज़ीफ़े जो एक ख़तीर रक़्म पर मुश्तमिल होती हैं। बयदरीग़ ख़र्च करते हैं। ख़ासतोर पर इन का दावती चैनल जिस का सिर्फ़ महिने भर का ख़र्च लाखों रूपये पर मुश्तमिल हाता है बल्कि करोड़ रूपये से भी तजाविज़ कर जाता है। यह सब देखते हुए महसूस होता है कि, कहीं ऐसा तो नहीं कि, बातिल जमाअ़तें और सामराजी क़ूव्वतें अहले इस्लाम में फ़ितना पैदा करने के लिए इनकी मदद कर रही हों। कहीं तारीख़ अपने को दोहरा तो नहीं रही है। जिस तरह सलतनते उस्मानिया के ज़वाल और उसके परसेमंज़र पर निगाह डाली जाती है तो इस का किरदार ''लारैंस ऑफ़ अ़रबिया'' तारीख़ के पर्दे पर उभर कर सामने आता है। इस सिलसिले में दूसरा नाम ''हमफ़रे'' का भी है। यह वो राज़ है कि जो सिर्फ़ एक या दो अफ़राद तक ही महदूद रहता है, यह वो राज़ होता है, जो इस तंज़ीम के बानी के सगे भाई बल्कि बीवी बल्कि बाप से भी पोशिदा होता है। यह वक़्त का एक अ़ज़ीम लमहए फ़िक्र है।

ज़रा ग़ौर करें ! आ़ला हज़रत कहें कि, ''**रद व बदमज़हब फ़र्ज़े आ़ज़म है। जिस का फ़ितना उठता देखें सदेबाब करें। वअ़ज़ उलमा की ज़रूरत हो तो वअ़ज़ कहलवाएं। इशाअ़ते रसाईल की हाजत हो तो इशाअ़त कराएं। हरबे इस्तेताअ़त इस फ़र्ज़े आ़ज़म में रूपया सर्फ़ करना फ़र्ज़ है।**'' लेकिन बात–बात पर आ़ला हज़रत का नाम लेने वाली दावती तहरीक का हाल तो यह है कि यह तंज़ीम कहे कि, ''**हमारे स्टेज से रद्दे वहाबियत नहीं होगा।**'' दीन व मज़हब में ख़्यानतें फैलाई जा रही हैं, कहीं ज़ाकिर नाईक के हवाले से कहीं ताहिर मिन्हाजी के ज़रिए। लेकिन अफ़सोस ! कहीं उनके चैनल पर इन का रद नहीं, कहीं इन के रद में कोई जलसा, कोई किताबचा नहीं और इस जमाअ़त की सब से मोअ़तबर किताब ''फ़ैज़ाने सुन्नत'' जो तक़रीबन तेरह सौ सफ़्हात पर मुश्तमिल है। इस में सब से अहम सब से पहला बुनियादी बाब ''अल–ईमान'' ही ग़ायब है। पूरी किताब पढ़ते जाईए, ना हिफ़्ज़ुलईमान, ना बराहीने क़ातआ़ कारद, ना तहज़ीरून्नास, ना तक़्विय–तुलईमान का रद, ना सिराते मुस्तक़िम, ना रिसाला यकरोज़ी और तज़कीरूलअख़वान का रद। यह मूंह और दावए सुन्नियत, यह मूंह और दावए तबलीग़ मस्लके आ़ला हज़रत कि इस मज़कूरा सख़ीम किताब में जो दावत ग़ैर इस्लामी के मानने वालों के नज़दीक معاذاللہ हदीस व क़ुरआन मुस्तनद फ़तावा से भी ज़्यादा मोतबर जैसे देवबंदी धरम में तक़वियतुलईमान, तबलीग़ी जमाअ़त वालों के नज़दीक ''फ़ज़ाईले आ़माल''। ना इस में देवबंदी की 'दाल' ना वहाबी का 'वाव' राफ़ज़ी की ना नेचरी का नून ना क़ादयानी का 'क़ाफ़' ना चकड़ालवी की 'च' ना ग़ैर मुक़ल्लिद की 'ग़ैन' ना ख़ारजी की 'ख़ै'।

لاحول ولاقوۃالاباللہالعلی العظیم

बल्कि अंदाज़ तो इस बदमज़हब मुबल्लिग़ की तरह है जो तबलीग़ का ढोंग तो बहुत रचे। लेकिन तबलीग़ करे तो सिर्फ़ क़ुरआने पाक की उन्हें आयतों को तिलावत करे, जिसमें किसी का रद मालूम ना होता हो। लेकिन उन आयतों को ज़बान पर लाना ही पसंद ना करे, जिन में कुफ़्फ़ार मुर्तदीन मुनाफ़िक़ीन का वाज़ेह रद्दो अबताल है। तो कोई क्या कह सकता है, ''**जिन्दगी**

भर की इस की तबलीग़ से किसी को सिराते मुस्तक़ीम मिल सकता है या वो खुद ही सीधी राह पा सकता है।'' हरगिज़ नहीं और वही इत्तेहादी तर्ज़े बयान मिनहा. जियों के साथ भी जारी है। ताहिरियों से, अंदरूने ख़ाना इत्तेहाद बल्कि ताहिरियों की तारीफ़ व तौसीफ़ और अ़त्तारी कहे कि, ''सौ साल में ताहिर जैसा मुहक़्क़िक़ नहीं पैदा हुआ।''

मगर अहले सुन्नत के उलमा पर हमले, उलमाए हक़ पर तअ़न व तशनीअ़, वाह ! क्या तबलीग़ है? क्या यही मस्लके आ़ला हज़रत है? ख़ैर जो तंज़ीमे वहाबिया से इत्तेहाद करे, इससे यह शिकवा और इनसे यह क्या बईद कि वो ताहिरियों से इत्तेहाद की बात करे।

क्या कोई अत्तारियों से पूछने वाला है कि, जब उलमाए अहले हक़ इन का तहरीरन–तक़रीरन रद करें। अ़व्वामे अहले सुन्नत को इन के ग़ैरशरई बल्कि बातिल अ़क़ाईद से रौशनास कराएं। लेकिन बोली यही कि, उलमा ने ना दीन का काम किया है, ना करने देंगे और यही तंज़ीम मस्लके आ़ला हज़रत का काम कर रही है। शायद इन दावतियों के नज़दीक चैनल चलाना और टी.वी. को घर–घर और मसाजिद में पहुंचाना ही मस्लके आ़ला हज़रत है। والعياذبالله تعالیٰइन के मंशूर के मुताबिक़ हमारे स्टेज से मीलादुन्नबी ﷺ के जलसे नहीं होंगे। कहीं कोई सुन्नी तंज़ीम ऐसा मंशूर बना सकती है? आ़ला हज़रत कुद्दसिर्रहु फ़रमाएं .

हश्र तक डालेंगे हम पैदाईशे मौला की धूम
मिस्ले फ़ारिस नज्द के क़िले गिराते जाएंगे

इस पर अ़त्तारियों ने कहा कि, ''हम फ़लां शहर में ईद मीलादुन्नबी ﷺ का जुलूस निकालते हैं। लेहाज़ा हम इसके मुख़ालिफ़ नहीं।'' तो फिर बात वही तज़ाद बयानी वाली आजाती है कि एक जगह इंकार वो भी तहरीर में लेकन जब बाज़ पर्स की जाती है तो कहा जाता है कि, ''हम इसके मुख़ालिफ़ नहीं।'' लेकिन इस तरह की मिसाल तो देवबंदियों में भी मिलेगी। इन के नज़दीक तो ईद मीलादुन्नबी ﷺ मुन्अ़क़िद करना ही शिर्क है। लेकिन वरना जाईए यूपी के शहर कानपूर का जुलूसे मुहम्मदी ﷺ जो कि एक बहुत बड़ी तादाद पर मुश्तमिल होता है। उस जुलूस की क़ियादत पर इन देवबंदियों की तंज़ीम जमिअ़तुल उलमा ने क़ब्ज़ा कर रखा है क्या इन के इस जुलूस निकालने की बुनियाद पर इस को सही कहा जाएगा? हरगिज़ नहीं। बल्कि यह तो अ़व्वामे अहले सुन्त के साथ धोका है और गोव. रनमेंट को अपनी क़ियादत दिखा कर दुनियवी फ़ाएदा हासिल करना है। इस मफ़ाद के लिए इन के सामने अब शिर्क व बिदअ़त की कोई हैसियत नहीं। ना किसी दिल्ली और सहारनपूर वाले किसी वहाबी ने कानपूर के वहाबियों से बाज़ पर्स की कि यह शिर्क व बिदअ़त वाला काम क्यों किया जा रहा है।

अब ज़रा क़ारेईन के सामने हम इन के थोक के हिसाब से गढ़े हुए ख़्वाबों के बारे में कुछ कहना चाहेंगे। दावते इस्लामी के एक इस्लामी भाईने १८ रमज़ानुल मुबारक को एक ख़्वाब देखा, ''**सरकार ﷺ तशरीफ़ फ़रमा हैं और फ़रिश्ते ने हाज़िर हो कर फ़रमाया कि, हुज़ूर ﷺ ! अल्लाह तआ़ला ने अलयास क़ादरी को सलाम भेजा है। सरकार फ़रमाते हैं, सलाम इलयास को पहुंच जाएगा।**'' (मुख़्लसन किताब–सरकार का पैग़ाम अ़त्तार के नाम)

क़ारेईन किराम ! ज़रा ग़ौर करें, पहले इस ख़्वाब की हक़ीक़त को मुलाहिज़ा करें। एक इस्लामी भाई ने ख़्वाब देखा। ख़्वाब देखने वाला ही नहीं मालूम। कहां का रहने वाला है? बाप का नाम क्या है? सक़ा है कि ग़ैर सक़ा? अब ज़रा इस ख़्वाब को देखें, अल्लाह तआ़ला सलाम भेज रहा है, रसूलुल्लाह ﷺ सलाम पहुंचा रहे हैं। (यहां हुज़ूर ﷺ को معاذالله एलची बताया) क्या कोई साबित करेगा कि, कभी कोई ऐसा ख़्वाब हुज़ूर आ़ला हज़रत क़िबला रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो के तअ़ल्लुक से किसी मोअ़तबर किताब में गुज़रा? जो एक ऐतेराफ़ी जाहिल अमीर के बारे में कहा जा रहा है। معاذالله

इसी किताब के स. ४४३ पर एक मजहूल ना मालूम शख़्स के नाम से एक ख़्वाब गढ़ा और लिख मारा, ''**मेरे दिल की आंखें खुल गई। मुझे अपने ज़ाहिर से मीठे-मीठे आक़ा मक्की मदनी मुस्तफ़ा ﷺ का दीदार नसीब हुआ। क़रीब ही नूरानी चेहरे वाले दो बुज़ुर्ग भी मौजूद थे। उनमें एक तरफ़ इशारा करके कुछ यूं इरशाद फ़रमाया, यह अहमद रज़ा हैं, इन के मस्लक को अपना लो। फिर दूसरे शख़्स के बारे में इरशाद फ़रमाया, यह इलयास क़ादरी हैं, इनसे मुरीद हो जाओ।**'' (मर्दो के लिए मीठा कहने में कई मानी हैं। एक मानी नामर्द भी है। इस लिए अम्बियाए किराम, औलियाए एज़ाम की शान में मीठा कहना हराम है।)

ज़रा ग़ौर करें कि, अगर इस ख़्वाब को मोअ़तबर माना जाए तो यह फ़रमाने मुस्तफ़ा ﷺ है कि इलयास से मुरीद हो जाओ। गोया जो इलयास से मुरीद हो गया, वो फरमाने मुस्तफ़ा ﷺ का आ़मिल हुआ और जो मुरीद ना हुआ, वो हुक्मे मुस्तफ़ा ﷺ का तारिक

हुआ। हुक्मे मुस्तफ़ा ﷺ को मानना वाजिब है और तारिके वाजिब गुनाहगार हुआ। लेहाज़ा जो ताजुश्शरिआ या किसी और सिलसिलए तरीक़त के बुज़ुर्ग से मुरीद हो गया, वो गुनाहगार हुआ या नहीं? معاذالله

हैरत में डूब जाने की बात है। जो टी.वी. एक अर्से दराज़ तक इस पाकिस्तानी जमाअ़त के नज़दीक हराम था और उसे दुश्मने सरकार क़रार दिया और अपनी किताब में भी लिख दिया कि, "सरकार ﷺ का दुश्मन है।"

फ़ैज़ाने सुन्नत–स. २७ पर उनवान "मदीना की धूल की बरकत" के तहत एक इस्लामी बहन का ख़्वाब तहरीर किया गया। जिस का खुलासा यह है कि, हैदराबाद की एक इस्लामी बहन का हलफ़िया बयान है कि, "**मेरी फूफी जान जो हमारे साथ ही रहती हैं और अमीरे अहले सुन्नत मुहम्मद इलयास क़ादरी साहब से बैत हैं। जब उन्हें मालूम हुआ कि टी.वी., वी.सी.आर. के सख़्त मुख़ालिफ़ हैं।**

लोहज़ा उन्होंने टी.वी. के सब तार वग़ैरह काट डाले, उसको स्टोर रूम में डाल दिया। उसी रोज़ दोपहर को जब मैं लेटी, मेरी आंख लग गई। मैं मदनी सरकार ﷺ के दीदारे फ़ैज़ आसार से मुशर्फ़ हुई। सरकारे दो आ़लम ﷺ खुश हो कर फ़रमा रहे थे, आज मैं बेहद खुश हूं कि तुमने मेरे बहुत बड़े दुश्मन टी.वी. को निकाल दिया है। लेहाज़ा मैं तुम्हारे घर आया हूं।"

और इस पर ख़्वाब दर ख़्वाब गढ़ डाले और इस दुश्मने सरकार ﷺ को चौराहों पर संगसार करवाया। लेकिन जब इन दावतियों के नज़दीक अपने ज़ाती मफ़ाद के लिए टी.वी. की माद्दी हैसियत और एहमियत का एहसास हुआ (जैसे ज़कात, फ़ंड, सदक़ा, फ़ित्रा वग़ैरह का एडवर्टाईज़ अ़त्तारी सिलसिले में मुरीद हो जाने की तश्हीर) तो दावतियों के अमीर ने टी.वी. को जाईज़ किया। معاذالله तो फिर ज़रा इस तहरीक की चाल देखिए कि इस के जवाज़ और इसी दुश्मने सरकार ﷺ के लिए फिर ख़्वाब गढ़वा डाले।

एक और ख़्वाब को दखिए और इन की जुर्रत व बेबाकी मुलाहिज़ा करें।

"**३० सफ़रूल मुज़फ़्फ़र १४३० हि. बरोज़ जुमेरात जब मैं ने मदनी चैनल पर सुंहरी जालियों का रूह परवर मंज़र देखा तो यकायक वही आवाज़ मुझे फिर सुनाई दी, अलफ़ाज़ कुछ यूं थे। मेरे इलयास को तुमने अभी तक मेरा पैग़ाम नहीं पहुंचाया।**" (सरकार ﷺ का पैग़ाम अ़त्तार के नाम)

ज़रा ग़ौर करें, इस दुश्मने सरकार ﷺ (टी.वी.) से सरकार ﷺ की आवाज़ आ रही है। आख़िर ऐसा क्यों हो रहा है? तो इस का जवाब यह होगा कि, इस तंज़ीम का तरीक़एकार यही है जो इस का अमीर कहे। वो मस्लके आ़ला हज़रत जो मना करे वो मुख़ालिफ़े मस्लके आ़ला हज़रत। معاذالله यह इन की शैतानी चाल है। क्योंकि इस जमाअ़त का अमीर खुले आ़म टी.वी. पर आ गया है। लेहाज़ा अ़व्वाम को यह ज़हन दिया जा रहा है कि, "जब सरकारे दो आ़लम ﷺ ने टी.वी. की मदद ले कर अपना पैग़ाम पहुंचाया, सरकार ﷺ की आवाज़ टी.वी. पर आ रही है तो अब अगर हमारे अमीर की आवाज़ टी.वी. पर आ गई तो इस में कौन सी क़बाहत है। معاذالله

इसी सिलसिले की एक और मिसाल हुज़ूर ख़्वाजए आ़ज़म की तस्वीर की इशाअ़त है। इस का भी मक़्सद यह है कि जब ख़्वाजा ग़रीब नवाज़ की तस्वीर हो सकती है तो इलयास की तस्वीर में कौन सी क़बाहत है। लेहाज़ा सुन्नी मुसलमानों ! इन की साज़िशों को समझो, अपने–पराए, दीन के दुश्मन की पहचान करो और सही मस्लक के मानने वालों के क़दम बक़दम चलो और दुश्मनाने मस्लके आ़ला हज़रत से दूर रहो। इसी में ईमान की हिफ़ाज़त है।

इसी किताब के स. ४३ पर एक ख़्वाब गढ़ा और किताब में छापा। नाम नियाद मुबल्लिग़ दावते इस्लामी अ़ब्दुल क़ादिर अ़त्तारी को एक बार ख़्वाब में सरकारे दो आ़लम ﷺ की ज़ियारत हुई। सरकार ﷺ ने फ़रमाया, "**इलयास क़ादरी को मेरा सलाम कहना और कहना कि जो तुम ने अलविदा ताजदारे मदीना वाला क़सीदा लिखा है। वो हमें बहुत पसंद आया है और कहना कि, अब की बार जब मदीना आओ तो कोई नया अलविदा लिखना और मुम्किन ना हो तो वही अलविदा सुना देना।**"

इस मक़ाम पर वहाबियों के एक ख़्वाब की बात याद आती है जो मदर्सए देवबंद के बारे में यह है कि, इस से मर्तबा इस मदर्से का मालूम हुआ। यह बात दावे से कहना चाहते हैं कि, "इससे मर्तबा इलयास अ़त्तार का, इलयास अ़त्तार के क़सीदे का मालूम हुआ।" अब दुनिया के मुसलमानों के लिए ज़रूरी है कि, सिर्फ़ इलयास अ़त्तार का लिखा हुआ सलाम, क़सीदा, बारगाहे रिसालत में हाज़िर हो कर पेश करें। अब क़सीदा बुर्दा शरीफ़, सरकार आ़ला हज़रत का मशहूर ज़माना सलाम और दिगर बुज़ुर्गाने दीन के नातिया अशआर व सलाम के पढ़ने की معاذالله ज़रूरत नहीं है। कम अज़ कम एक ख़्वाब सरकार आ़ला हज़रत के बारे में भी देख

लिया होता। यहां पर इस ख़्वाब के बारे में ग़ौर तलब बात यह है कि, नबी ﷺ फ़रमाएं, "कोई नया अलविदा लिखना और मुम्किन ना हो तो वही अलविदा सुना देन. ा।" कैसा इल्मे ग़ैबे मुस्तफ़ा पर हमला है और इख़्तेयारे मुस्तफ़ा ﷺ को मशकूक बनाया जा रहा है कि, नबी ﷺ हुक्म दोन कि नया अलविदा लिखना और मुम्किन ना हो तो वही अलविदा सुना देना। معاذالله गोया नबी ﷺ को इस बात का इल्म ही नहीं कि, इलयास नया अलविदा लिख सकता है कि नहीं? और सरकार ﷺ को इख़्तेयार ही नहीं कि इलयास से नया अलविदा लिखवा सकें। معاذالله हमारा अक़ीदा है कि, नबी ﷺ अगर फ़रमाएं तो ग़ैर मुम्किन, मुम्किन हो जाए.............

तिनका भी हमारे तो हलाए नहीं हलता
तुम चाहो तो होजाए अभी कोहे महन फूल
मैंतो मीलक हि काहूंगा के हो मालिक के हबीब
यानी महबूब व महब में नहीं मेरा तेरा

इसी किताब के स. ३१ पर एक ख़्वाब गढ़ा। सरकार ﷺ फ़रमा रहे हैं, "**इस ज़मामे के तमाम औ. लिया में इलयास क़ादरी से मुझे सब से ज़्यादा मुहब्बत है। हमेशा उनकी इताअ़त करते रहना और इन के दामन को कभी मत छोड़ना। इन के दिए हुए मदनी इनामात के मुताबिक़ अ़मल करते रहना। यह मदनी इनामात मेरे इस प्यारे की तरफ़ से उम्मत के लिए तोहफ़ा है।**"

ग़ौर करें ! इस ज़माने के औलिया में इलयास से मुझे सब से ज़्यादा मुहब्बत है यानी इलयास की विलायत की गवाही सरकार ﷺ दे रहे हैं। (معاذالله) और जितने वली हैं उनमें सबसे बडा मर्तबा इल्लास का हैं (معاذالله) इस लिए जिस से ज़्यादा मुहब्बत होगी उतना ही इस उस का मर्तबा बड़ा होगा। और दूसरा हुक्म कि, "हमेशा इन की इताअ़त करते रहना और इन के दामन को कभी मत छोड़ना चाहे हलाल को हराम और हराम को हलाल कहते रहें।" معاذالله क्या कभी किसी ने इस तरह का वाक़िया किसी जलीलुलक़द्र आ़लिम, बुज़ुर्गाने दीन में से या आ़ला हज़रत के तअ़ल्लुक़ से सुना? सरकार आ़ला हज़रत क़ुद्दसिर्रहु तो जब इस दुनिया से दारे आख़ेरत की तरफ़ सफ़र फ़रमा रहे हैं तो उस वक़्त यह वसीयत फ़रमा रहे हैं कि, "**मेरा दीन व मज़हब मेरी किताब से ज़ाहिर है। हमेशा इस पर अ़मल करते रहना।**" लेकिन यह कैसे आ़शिक़े आ़ला हज़रत है कि सिर्फ़ अपनी इताअ़त के बारे में गढ़े हुए ख़्वाबों को अपनी किताबों में छपवा कर हज़ारों–लाखों की तादाद में तक़्सीम करा रहे हैं। नीज़ बयान सरकार ﷺ पर इतनी बड़ी तोहमत की जुर्रत कि एक जाहिल के बारे में फ़रमाएं कि, "हमेशा उनकी इताअ़त करते रहना।" अल्लाह ﷻ अपने रसूल ﷺ की इताअ़त का हुक्म दे और रसूले करीम ﷺ ने अपने ख़ुलफ़ाए राशेदीन मुहद्दीईन की इत्बाआ़ का हुक्म फ़रमाएं और सवादे आ़ज़म यानी मज़हबे अहले सुन्नत, मस्लके आ़ला हज़रत फ़रमाएं और ख़्वाब गढ़ने वाला सिर्फ़ इलयास के ताबेदार हैं तो क्या वो तारिक वाजिब हैं या नहीं? और इन के मदनी इनामात के मुताबिक़ अ़मल करते रहना तो क्या यह कहा जाए معاذالله यह चैनल भी मदनी इनामात में से है। यह इसी का नतीजा है कि अ़त्तारी बिकने लगे। काग़ज़ का मूंह अपने मूंह की तरह काला करने लगे आर यहां तक कह डाला ....

मदनी चैनल में जो साथ दे अ़त्तार का
इस पर रहमत हो ख़ुदा की आर करम सरकार का
जिस को मदनी चैनल से प्यार है
इंशाअल्लाह उस का बेड़ा पार है

आईए एक और ख़्वाब की तरफ़ चलते हैं। स. ३६/३७ पर एक ख़्वाब गढ़ा, **एक यमनी बुज़ुर्ग बयान करते हैं, मैंने अपने आपको ख़्वाब में मक्का मुकर्रमा मे पाया। इतने में हुज़ूर ﷺ तशरीफ़ लाए और मेरा हाथ पकड़ कर मुझे काबातुल्लाह शरीफ़ के दरवाज़े पर लाए ओर काबातुल्लाह श्रीफ़ का दरवाज़ा खुल गया। मैं सरकारे मदीना राहते क़ल्ब व सीना के साथ अंदर दाख़िल हो गया। वहां एक शख़्स अपने सर पर सब्ज़ अ़मामा शरीफ़ पहने बैठे हुए थे। उनकी तरफ़ इशारा करते हुए मदनी सरकारे दो आ़लम मालिक व मुख़्तार ﷺ ने इशारा फ़रमाया, दावते इस्लामी के अमीर मुहम्मद इलयास क़ादरी हैं।**"

क़ारईने किराम ! ज़रा ग़ौर करें कि, सरकारे दो आ़लम ﷺ यमनी बुज़ुर्ग को ले कर काबा शरीफ़ के अंदर तशरीफ़ ले जा रहे हं। यानी अल्लाह के नबी ﷺ, इलयास का तआ़रुफ़ करा रहे हैं। इस बयान से पता चला कि जब दीदारे अ़त्तार को टी.वी. पर ख़ान खुदा में करा कर भी जब दिल नहीं भरा तो अब नबी ﷺ के ज़रिए इलयास का तआ़रुफ़ कराया जा रहा है। इस बयान में यह भी क़ाबिले ग़ौर है कि यह जुम्ला "बैठे हुए थे" और नबी ﷺ खड़े हुए हैं। क्योंकि नबी ﷺ के मर्तबा के मुक़ाबले इस दावती को अपने अमीर के आ़ला मर्तबा हो जाने की ज़्यादा फ़िक्र लाहक थी। बहरहाल, सूरते मज़कूरा में यह बात बिल्कुल वाज़ेह है कि, इलयास बैठा है और नबी ﷺ खड़े हुए हैं।

क़ारेईने किराम ! ज़रा सरकार आला हज़रत कुद्दसिर्रहु की बारगाह में चलें। जब मेरा मुजद्दिद इस दारेफ़ानी से दारेबक़ा की तरफ़ कूच करने लगो तो अपने मोअ़तक़दीन को बुलाया और वसीयत फ़रमाई, **"जब मेरा इंतेक़ाल हो जाए और मेरी क़ब्र खोदी जाए तो इतनी गहरी हो कि मैं आराम से ख़ड़ा हो जाऊं।"** लोगों ने पूछा, "हुज़ूर ऐसा क्यें?" इरशाद हुआ कि, **"फ़क़ीर ज़िन्दगी भर ताज़ीमे मुस्तफ़ा ﷺ का दर्स देता रहा और खड़े हो कर सलाम पढ़ता रहा और खड़े हो कर सलातो सलाम पढ़ने की हल्त, फ़ज़ीलत और बाईसे शफ़ाअ़त नबीए अकरम ﷺ पर दलीलें देता रहा और इस अम्रे महमूद के मुंकिरीन पर शरई हुदूद क़ायम करता रहा। तो जब कल क़ब्र मैं सरकारे दो आ़लम ﷺ तशरीफ़ लाएंगे तो मुझे यह कैसे गवारा होगा कि उस वक़्त मैं लेटा रहूं। बल्कि खड़े हो कर सरकारे दो आ़लम ﷺ की बारगाह में सलाम पेश करूं।"**

سبحان الله ! यह मेरे आ़ला हज़रत रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो की अ़ज़मत दुनिया में रहे तो ताज़ीमे मुस्तफ़ा ﷺ का दर्स देते रहे और दुनिया से तशरीफ़ ले जा रहे है तो ताज़ीमे मुस्तफ़ा ﷺ का दर्स देते रहे और दुनिया से तशरीफ़ ले जा रहे हैं तो ताज़ीमे मुस्तफ़ा ﷺ का दर्स देते हुए जा रहे हैं। लेकिन अब नाम निहाद आशिके़ आ़ला हज़रत को देखिए कि, इलयास बैठा हुआ है और सरकारे दो आ़लम ﷺ खड़े हुए हैं। क्योंकि जब सरकारे दो आ़लम ﷺ तशरीफ़ लाए तो इलयास खड़ा हो जाता लेकिन खड़ा कैसे होता इस लिए कि सरकारे दो आ़लम ﷺ की बारगाह में अपनी अ़ज़मत साबित करना था। सच फ़रमाया उलमाए हक़ ने कि ख़बीस क़ल्ब से ही ख़बीस ख़्यालात बाहर आते हैं। अगर खुब्से बातिनी के सबब यह ख़्वाब शैतान ने दिखा भी दिए थे तो ऐसे बे अदब गढ़े हुए ख़्वाबों को आख़िर छुपाने की कौनसी मजबूरी और शरई ज़रूरत थी?

इलयास अ़त्तार ने अपनी बहुत मोटी किताब "फ़ैज़ाने सुन्नत" के स. ३ पर लिखा, सरकारे दो आ़लम ﷺ फ़रमाते हैं, **"यह फ़ैज़ाने सुन्नत है और मेरे इलयास की तरफ़ से मेरी उम्मत के लिए तोहफ़ा है।"**

मुसलमानों ! होश में आओ और अल्लाह ﷻ और उसके रसूल ﷺ की पनाह मांगते हुए हक़ पर साबित क़दम रहने की दुआ़ करो कि इस किताब में जो इस जमाअ़त की सब से मोअ़तबर किताब है, इस में इस ख़्वाब को नक़्ल करके अल्लाह ﷻ के रसूल ﷺ की बारगाह में कैसी शदीद तौहीन की गई है कि, ऐसी किताब जिस में जगह–जगह ऐसी चीज़ें बयान की गई हैं, जो कुफ़्रियात पर मुश्तमिल हैं। जैसे इसी किताब के स. १२८३ पर ईदुलफ़ित्र और रमज़ानुल मुबारक के ज़िक्र के तहत एक इबारत नक़्ल की गई है।

"हम ईद क्यों ना मनाएं, देखिए जब कोई मुल्क किसी ज़ालिम हुकूमत के चंगुल से आज़ादी पाता है तो हर साल की इसी माही की इसी तारीख़ को उसकी यादगार के तौर पर जश्न मनाया जाता है।" जिसको कई मुफ़्ियाने किराम ने फ़तावए रज़विया शरीफ़ के हवाले से कुफ़्र क़रार दिया है। नीज़ मुफ़्ती अय्यूब साहब नईमी और मुफ़्ती शमशाद साहब ने भी इस इबारत पर हुक्मे कुफ़्र साबित किया है और इन के फ़तवे की नक़्लें काफ़ी तादाद में शाए हो चुकी हैं।

अफ़सोस सद अफ़सासे ! जिस किताब से उलमाए अहले सुन्नत कुफ़्र साबित करें। इसी किताब को नाम निहाद दावते इस्लामी वाले कहें कि, **"यह सरकार की तरफ़ से उम्मत के लिए तोहफ़ा है।"** **معاذ الله** तो क्या यह सरकारे दो आ़लम ﷺ की तौहीन नहीं है? या फिर सरकारे दो आ़लम ﷺ को मालूम ना था कि, **"मैं जिस को उम्मत के लिए तोहफ़ा क़रार दे रहा हूं, इस किताब में शरई ख़राबियां यहां तक कि कुफ़्रीयात भी मौजूद हैं।"** मज़कूरा ख़्वाब से क्या इल्मे ग़ैबे मुस्तफ़ा ﷺ का इंकार लाज़िम नहीं आता? क्या यह इल्मे ग़ैबे मुस्तफ़ा ﷺ पर हमला नहीं? ज़रूर है। लेकिन इन नाम निहाद दावतियों को तो इस ख़्वाब को बयान करके अपने ज़ाती मफ़ाद के लिए कुछ चीज़ों को साबित करना था।

१. कि अब इस किताब की हर एक बात कुबूल करना लाज़िम व ज़रूरी है क्योंकि यह तोहफ़ए सरकार ﷺ है।

२. हुज़ूर सरकारे ग़ौसे आ़ज़म रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो व सरकार हुज़ूर आ़ला हज़रत रज़िअल्ला. हो तआ़ला अन्हो का ज़िक्र कर के और तोहफ़ए सरकार ﷺ क़रार दे कर यह साबित करना है कि हुज़ूर ग़ौसे पाक व हुज़ूर आ़ला हज़रत रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हुमा के नज़दीक भी क़ाबिले कुबूल है। ताकि अ़व्वामे अहले सुन्नत में से किसी को चून व चरा की गुंज़ाईश ना रहे।

३. ताकि अ़व्वामे अहले सुन्नत सिर्फ़ और सिर्फ़ फ़ैज़ाने सुन्नत ही का मुतालआ़ करें। अब उन्हें किसी बुज़ुर्ग, किसी आ़लिम की किताब पढ़ने की ज़रूरत नहीं है। क्योंकि सिर्फ़ फ़ैज़ाने सुन्नत ही एक ऐसी किताब है जो सरकार ﷺ की तरफ़ से उम्मत के लिए तोहफ़ा है। या सिर्फ़ इलयास की लिखी हुई किताबों का ही

मुतालआ करें। معاذاللہ

इस नाम निहाद दावते इस्लामी के मक्तब से शाए होने वाली एक किताब जिस का नाम रखा '**मुन्ने की लाश**'' जिस में जगह जगह पीराने पीर दस्तगीर सरकारे ग़ौसे आ़ज़म रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो को ''मदनी मुन्ना'' कहा गया और एक जगह सरकारे ग़ौसे पाक रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो के लिए लिखा ''**मदनी मुन्ना गिर पड़ा**'' या सिर्फ़ इलयास को मुन्न कहे। क्या इलयास के मानने वालों को बुरा नहीं लगेगा? फिर क्यों नहीं इसी किताब के टाईटल पर इलयास अ़त्तार को पाकिस्तानी मुन्ना क्यों नहीं लिख कर छाप दिया? इस लिए कि इस लफ़्ज़ में दावतियों के नाम निहाद अमीर की और इस के चेलों को तौहीन मालूम होगी।

तो क्या जिस इबारत में इलयास की तौहीन हो, क्या इस में हुजूर ग़ौसे पाक रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो की तौहीन ना हुई? ज़रूर होगी। लेकिन अ़त्तारियों को सिर्फ़ अपने नाम निहाद अमीर से ऐसी मुहब्बत व अ़क़ीदत है कि इस मुहब्बत व अ़क़ीदत के बदले किसी बुज़ुर्ग की शान में गुस्तख़ी लाज़िम आए, वो भी उन्हें गवारा है? معاذاللہ

इन ही दावते ग़ैर इस्लामी वालों ने अपने मक्तबतुल मदीना से शाए होने वाली एक किताब ''**मुख़ालिफ़त मुहब्बत में कैसे बदल गई**'' के स. १६ पर एकख़्वाब लिखा, जिस का खुलासा यह है कि, **इलयास सरकारे ग़ौसे पाक रज़िअलाहो तआ़ला अन्हो के बराबर वाली कुर्सी पर बैठा हुआ है और ग़ौसे पाक मुरीद करते हुए वही अलफ़ाज़ दोहरा रहे हैं, जो इलयास पढ़ाता है।**

क़ारेईने किराम ! बनज़र इंसाफ़, इस ख़्वाब को पढ़ें। ख़्वाब की आड़ ले कर सरकारे ग़ौसे पाक रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो की कैसी खुली तौहीन की जा रही है। معاذاللہ कि इलयास अ़त्तार, सरकार ग़ौसे पाक रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो के बराबर वाली कुर्सी पर बैठा हुआ है।

लेकिन अफ़सोस सद अफ़सोस ! इलयास अ़त्तार, सरकार ग़ौसे पाक रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो के बराबर में बैठने का दावा करके अ़व्वाम को यह ज़हन देना चाहता है कि, ''**बड़े-बड़ों को मर्तबा तो ग़ौसे पाक रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो के क़दमों तक है लेकिन मेरा मक़ाम यह है कि मैं सरकारे ग़ौसे पाक रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो के बराबर बैठा हूं। मेरा मर्तबा पहचानो।**معاذاللہ

तू हुसैनी हस्ना क्यों ना मुहीउद्दीन हो
ऐ ख़िज़र मजमए बहरीन है चश्मा तेरा
सर भला क्या काई जाने कि है कैसा तेरा
औलिया मलते हैं आंखें वा है तलवा तेरा

२. सरकार ग़ौसे पाक रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो मुरीद फरमाते हुए वही अलफ़ाज़ पढ़ा रहे हैं, जो अमीरे अहले सुन्नत पढ़ते हैं। यानी सरकारे ग़ौसे पाक रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो नक़्ले अलफ़ाज़ में इलयास के ताबेअ़ हुए। معاذاللہ

३. सरकार हुजूर ग़ौसे पाक रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो फ़ैज़ाने सुन्नत से दर्स दे रहे हैं। इस से अ़व्वाम को यह ज़हन देना है कि जब हुजूर ग़ौसे पाक रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो इस किताब से दर्स दे रहे हैं तो यह एक सुन्नी पर लाज़िम है। चाहे वो मौलाना हो या मुफ़्ती हो कि हुजूर ग़ौसे पाक रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो की सुन्नत पर अ़मल करते हुए फ़ैज़ाने सुन्नत से दर्स दिया करे। ग़ौसेपाक रज़िअल्लहो तआ़ला अन्हो की सुन्नत पर अ़मल करे। معاذاللہ

(इन पाकिस्तानी दावतियों की इस बेबाकाना जुर्रत से बईद नहीं कि इस तरह का ख़्वाब भी गढ़ कर छाप दें कि हुजूर ﷺ भीمعاذاللہ फ़ैज़ाने सुन्नत का दर्स दे रहेथे।لاحول ولاقوۃالاباللہ العلی العظیم)

अफ़सोस ! इन पाकिस्तानी दावतियों ने कैसी शदीद सरकारे ग़ौसे पाक रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो की तौहीन की है जब कि इस दौर में हुजूर ग़ौसे पाक रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो के दर के टुकड़ों पर पलने वालों ने इलयास अ़त्तार पाकिस्तानी की किताब फ़ैज़ाने सुन्नत में कितनी शरई ख़ामियां। यहां तक कि इस किताब की एक इबारत पर हुक्म कुफ़्र सादिर कर दिया। लेकिन इन पाकिस्तानी अ़त्तारियों ने इस कुफ़्रीया इबारत वाली किताब से हुजूर ग़ौसे पाक रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो को दर्स देना साबित करते हुए कैसा ख़तरनाक बोहतान आपकी ज़ाते मुबारक पर बांध कर वहाबिया को यह बात कहने का मौक़ा दिया कि, तुम्हारे पीराने पीर एक किताब में सही—ग़लत तक से वाक़िफ़ ना थे। बल्कि हुजूर ग़ौसे पाक ही क्या बल्कि हुजूर सरवरे आलम ﷺ की ज़ाते मुबारका पर भी वहाबिया दयाबना को सवाल करने का मौक़ा इन ही पाकिस्तानी दावतियों ने दिया कि, ''**तुम्हारे नबी तो** معاذاللہ **इतना भी इल्म नहीं रखते थे कि जिस किताब को मैं उम्मत के लिए तोहफ़ा क़रार दे रहा हूं, उस में शरई ख़राबियां भी हैं।**'' معاذاللہ इतना भी इल्म नहीं रखते थे कि, जिस किताब को मैं उम्मत के लिए तोहफ़ा क़रार दे रहा हूं उस में शरई ख़राबियां भी हैं। معاذاللہ

सुन्नी मुसलमानों ! यही तो दावते इलयासी की खुफ़िया प्लानिंग है कि मस्लके आला हज़रत और आला हज़रत कहते–कहते पूरे दीन को ही तहस–नहस करदें। अल्लाह ﷺ हम सुन्नियों को इन के शर से महफ़ूज़ फरमाए। आमीन

नाम निहाद दावते इस्लामी के अमीर इलयास अत्तार की एक किताब "मुग़ीलाने मदीना" काफ़ी अर्से पहले मंज़रे आम पर आई। जिस में एक सलाम बारगाहे रिसालत ﷺ की जानिब मंसूब किया। जिस के कुछ अश्आर क़ारईने किराम, तहरीर किए जाते हैं। पढ़कर बनज़रे इंसाफ़ खुद ही फ़ैस्ला करें .....

बोतलों बल्कि तो ढकनों को दाल गंदुम के दानों चनों को
चूम कर आंख से भी लगा कर तू सलाम मेरा रो-रो के कहना
बैगनों, भेडियों, तुरयों को गोभियों, गाजर, मूलियों को
आंख से लो क्यों को लगा कर तू सलाम मेरा रो-रो के कहना
चूंटियों, खोटियों, टोटियों को हर तरह की जड़ी बूटियों को
बार-बार उन पे नज़रें जमा कर तू सलाम मेरा रो-रो के कहना
चावलों रोटियों, बोटियों को मुर्ग़, अंडो को और मच्छलियों को
सबज़ियों को वहां की पका कर तू सलाम मेरा रो-रो के कहना
थालियों को प्यालियों को कहना मिर्च को और मसालों को कहना
बत्तियों को वहां की जला कर तू सलाम मेरा रा-रो के कहना
संगरेज़ों को और पत्थरों को ऊंट, घोड़ों, खुरों, ख़च्चरों
और परिन्दों पे नज़रें जमा कर तू सलाम मेरा रो-रो के कहना
तू दरख़्तों को और झाड़ियों को उनकी गलियों की सब गाड़ियों को
हाथ अपना अदब से लगा कर तू सलाम मेरा रो-रो के कहना
रस्सियों, कैंचियों और छुरियों, चादरों, सुई, धागों को दरियों
सब को सीने से अपने लगा कर तू सलाम मेरा रो-रो के कहना
ठंडे पंखों को और हेटड़ों को बल्कि तारों को और मीटरों को
बत्तियों को वहां की जला कर तू सलाम मो रो-रो के कहना
कूए महबूब की बकरियों को, मुर्ग़ीयों, ककड़ियों, लकड़ियों को
बल्कि तिंके वहां के उठा कर तू सलाम मेरा रा-रो के कहना

वग़ैरह–वग़ैरह।

देखा आप ने? सलाम सरकार ﷺ की आड़ ले कर कैसी सरकारे दो आलम ﷺ की तौहीन की जारी है। यह सिर्फ मेरा कहना नहीं है बल्कि कई मुस्तनद मुफ़्तियाने किराम ने अपने फ़तवों में तहरीर किया कि, इस सलाम से तौहने सरकारे दो आलम ﷺ मुत्बादिर है। फिर जब इस जमाअत ने देखा कि इस सलाम से उलमा और अ़व्वाम में मुख़ालिफ़त काफ़ी बढ़ती जा रही है। यहां तक कि इलयास के लिखे हुए सलाम के रद में देवबंदी मौलवियों ने एक किताब लिखी और इस किताब का नाम रखा, "**बरेली मस्लक की मीठी-मीठी सुन्नतें**" (इब्ने त्अले दीन, मत्बूआ मकतबतुल फ़हीम मऊनाथ, भंजन, यू.पी.)

इन देवबंदियों का जवाब उलमाए अहले सुन्नत ने तक़रीरन और तहरीरन दे कर जब नाम निहाद मुब. ल्लिग़ीन दावते इस्लामी वालों से उस के बारे में पूछा तो जवाब मिला, "**वो किताब बंद कर दी गई। किस ने कहा कि ग़लती से हो गया।**" लेकिन एक अर्से बाद जब अ़व्वाम और उलमा का ज़हन इस जानिब से हटातो फिर नाम निहाद दावते इस्लमी के मक्तब वालों ने शाए की। जिस किताब का नाम रखा "**वसाईले बख़्शिश**" इस किताब कि स. ५८८ से ५६४ तक उसी सलाम को दोबारा इस किताब में बअ़ईना शमिल कर दिया। **لاحول ولاقوة الا بالله العلى العظيم** यह दावते इलयासी वालों को कोई नया कारनामा नहीं है। बल्कि देवबंदी रविश को अपनाते हुए इन की यह आदत सी बन चुकी है। इन की किताब की जिस इबारत पर उलमा शदीद रद करेंतो अ़व्वाम के डर से कभी इस किताब की इबारत को हज़फ़ कर देते हैं। कहीं कहते हैं, "यह हमारी किताब नहीं।" कहीं कहते हैं, "यह हमें बदनाम करने की साज़िश है।" यह हाल तो वहाबिया दयाबना का भी रहा है। फिर नाम निहाद दावते इस्लामी वालों को इस पर बस नहीं और जुर्रत यहां तक बढ़ गई कि उलमाए अकाबिर बल्कि हुज़ूर आला हज़रत रज़िअल्लाहो तआला अन्हों की किताबे मुबारका को अपने मुक्तबों से शए करने का बहाना बना कर उनकी किताबे मुबारका में तहरीफ़ व तबदील, कमी व बेशी करना शुरू कर दिया। जैसा कि किताब मुस्तताब "अल–मलफ़ूज़ शरीफ़"। जिस को इन दावतियों ने अपने मक्तबतुल मदीना से शाए किया। इस में कम व बेश ३६ जगह इबारतों को हज़फ़ किया गया। फिर भी यह नारा दिया गया कि, "हम बहुत बड़ा काम कर रहे हैं।" साथ ही साथ अ़व्वाम और उलमा से वाह–वाही भी वसूल की और खुफ़ियातौर से उन किताबे मुबारका में तहरीफ़ाते भी शरू करदें। फिर जब उलमाए हक़ ने उनका रद तहरीरन और तक़रीरन किया तो फिर जवाब यह मिला कि "हम से ग़लती हो गई, किताब बंद कर दी गई।" लेकिन अफ़सोस ! आज भी वही तहरीफ़शुदा किताबें फ़रोख़्त की जा रही हैं। इस मौक़े पर मैं अ़व्वाम और उलमा से गुज़ारिश करना चाहूंगा कि अब मक्तबतुल मदीना से शए शुदा किसी भी अकाबिर की किताबे मुबारका पर ऐतेमाद ना करें। इस लिए नहीं मालूम उन्होंने किस किताब में कहां–कहां से किन–किन इबारतों को हज़फ़ किया। या तहरीफ़ की या अपनी तरफ़ से कम व बेश किया है और फिर इसी तर्ज़ पर चलते हुए एक किताब मंज़रे

आ़म पर आई, जिस किताब का नाम रखा "**सरकार का पैग़ाम अ़त्तार के नाम**" हिन्दी एडिशन। इस में एक जगह लिखा, "**अमीरे अहले सुन्नत** ﷺ معاذالله) और वो किताब की काफ़ी अर्से तक मार्केट में फ़रोख़्त की जाती रही। फिर जब उलमाए अहले सुन्नत की नज़र इस किताब पर पड़ी और इस का रद किया तो फिर जवाब यही मिला कि "**ग़लती हो गई। किस मुबल्लिग़ ने कहा कि, यह हमारी किताब नहीं।**" अल–ग़र्ज़ जहां जैसा माहौल व मौक़ा देखा, वहां वैसी बात बना डाली। फिर वही किताब "सरकार का पैग़ाम अ़त्तार के नाम" हिन्दी और उर्दू एडिशन जिन में लिखे हुए ख़्वाबों पर उलमाए किराम ने इनकी गिरफ़्त की और इन का रद तक़रीबन व तहरीरन किया तो फिर उन्होंने यह कहना शुरू किया, "यह हमारी किताब नहीं" या "ग़लती हो गई।" वग़ैरह–वग़ैरह। फिर आख़िरकार उन्होंने अ़वाम की मुख़ालिफ़त के डर से इस किताब को अपने मक्तबों से फ़रोख़्त करना बंद कर दिया। जैसा कि इन के अमीर की खुफ़िा हिदायतों में यह भी शामिल है कि इस ने अपने मुबल्लिग़ीन के नाम अपने खुफिया मक्तूब में पांच खुफ़िया तंबीहात दावते इस्लामी के मुबल्लिग़ीन को लिखी थीं, जिस में पांचवें तंबीह यह है।

"५ मदीना : अपनी किताब नमाज़ का जाएज़ा का पहला एडिशन मक्तबतुल मदीना से उठा लिया जाए। इसे अ़व्वाम के सामने ना आने दिया जाए।" इसी खुफ़िया प्लानिंग पर अ़मल करते हुए "सरकार का पैग़ाम अ़त्तार के नाम" किताब को मकतबतुल मदीना से उठा लिया गया और अ़व्वामे अहले सुन्नत से पैसा ले कर के भी उसे फ़रोख़्त करने से मना कर दिया गया। आख़िर किन वजूहात पर ऐसा किया गया?यह मालूम नहीं। अगर ऐसा करना शरई बुनियाद पर था। तो फिर वो किताबें हज़ारों की तादाद में पब्लिक के हाथें में पहुंच चुकी थीं। (जब कोई एक शादी कार्ड भी छापता है तो उसकी प्रूफ़ रीडिंग चार लोग से करवाता है। लेकिन इतनी बड़ी किताब बग़ैर इस्लाह के कैसे छप गई।) और इस किताब से मुबल्लिग़ीन ने दर्स भी दिए तो अब इस का ज़िम्मादार इंदलशरआ़ कौन होगा? या फिर कोई तौबा नामा इलयास अ़त्तार का या रजूअ़ नामा अ़व्वामी तौर से शाए हुआ या फिर इस जमाअ़त की यह खुफ़िया प्लानिंग है कि माहौल साज़गार होते हैं। दूसरी किताबों की तरह दोबारा मंज़रे आ़म पर ले आएं।

फिर एक ख़्याली तस्वीर जिस में ख़्वाजए आ़ज़म रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हों की जानिब मंसूब किया गया। जो मक्तबतुल मदीना, बापूनगर, अहमद.ाबाद शरीफ़ से शाए की गई। सिर्फ़ इस लिए कि अगर इलयास अ़त्तार टी.वी. पर आ चुका है तो यह कौन सी बड़ी बात है। जब कि ख़्वाजा ग़रीब नवाज़ रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो की भी तस्वीर मौजूद है। معاذالله लेकिन जब उलमा ने इस का रद शुरू किया तो कई मुबल्लिग़ीन ने कहा कि, "यह हमने नहीं छापी, यह हमारा मक्तब नहीं।" जब कि इस पर साफ़–साफ़ मक्तबतुल मदीना, अहमदाबाद शरीफ़ के नाम से पूरा पता लिखा हुआ था। फिर जब रज़ा एकेडमी, मुम्बई ने राष्ट्रीय सहारा, उर्दु रोज़नामा में इस का रदशाए किया और इन जमाअ़तियों से मुताबए तौबा किया और फिर मुसलमानाने चित्तोड़गढ़, राजस्थान ने ग़ुस्से में आकर पॉम्पलेट छाप कर इन दावतियों को जिन्होंने सरकार ग़रीब नवाज़ रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो की तौहीन की। जिस को हज़ारों की तादाद में सरकार ग़रीब नवाज़ रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो के उर्स सरापा अक़दस में बटवाया गया।

फिर अ़व्वाम की मुख़ालिफ़त के डर से एक अख़्बार में इन दावतियों का मज़मून छपा कि, "**इस तस्वीर को हमने नहीं शाए किया।**" यह बयान दे कर झूट की फ़ेहरिस्त में एक झूट का और इज़ाफ़ा किया। जबकि शहर अहमदाबाद शरीफ़ के लोग ख़ूब अच्छी तरह से वाक़िफ़ हैं कि यह मक्तब इन्हीं का है। लेकिन आख़िर ऐसा क्यों ना हो जब इस जमाअ़त का अमीर ही झूटों का सरग़ना हो तो यह क्यों ना झूट बोले। ले.हाज़ा क़ारेईने किराम ! यह तो वाज़ेह हो गया कि, यह जमाअ़त एक खुफ़िया प्लानिंग के तौर पर काम कर रही है। जिस का मक़सद मस्लके आ़ला हज़रत का नारा लगा कर मस्लके आ़ला हज़रत को तहस–नहस करना है। इस के आसार काफ़ी हद तक नुमायों भी हो चुके हैं कि जगह–गजह किताबां में तहरीफ़, जगह–जगह सरकारे दो आ़लम ﷺ की तौहीन, कहीं सरकार ग़ौसे पाक रज़िअल्लाहो तआ़ला अन्हो की अ़ज़मत व तक़द्दुस से खिलवाड़, कहीं आ़ला हज़रत क़ुद्दसिर्रहु के फ़तवों से रूगर्दानी इस जमाअ़त का शेवा बन चुका है। अभी हालिया दिनों में दावते इस्लामी की जानिब से एक पोस्टर इंटरनेट पर शाए हुआ। जिस पोस्टर की हैडिंग थी "**अहमद रज़ा ख़ान बरेलवी, गुस्ताख़े रसूल ﷺ व काफ़िर**" लेकिन आज तक इस पर ख़ामोशी तारी है। उलमान ने रद किया लेकिन इस के बावजूद भी दावि.तयों के ख़ुदसाख़्ता अमीर ने बज़ाते खुद इस से रूजूअ़ नामा वग़ैरह शाए नहीं किया। अफ़सोस सद अफ़सोस ! मुसलमानो ! यह इनकी खुफ़िया चालें है। अगर यह

देखें कि अ़व्वाम में इस की मुख़ालिफ़त ज़ोर पकड़ रही है तो अ़व्वाम के डर से छोटी से मक्र भरी परचिया शाए करदें गे या तो वो भी नहीं। यानी इन के दिलों में ना अल्लाह का ख़ौफ़ है ना रसूल ﷺ से शर्म, ना शरिअ़त का पास, ना दीन का लिहाज़। ولاحول ولاقوة الا بالله العلى العظيم बल्कि अ़व्वाम ही के ऐतेबार से उन का हर एक लाहिया अ़मल होता है। लेकिन हैरत होती है इन ज़रख़. रीद मौलवियों पर जो तक़रीर और तहरीर में यह कहते फिरते हैं कि, "**किसी भी चीज़ में अगर कोई ख़राबी हो जाए तो इस ख़राबी को दूर किया जाएगा ना कि इस चीज़ ही को दूर कर दिया जाए।**" हम मानते हैं कि हां ! दावते इस्लामी में कुछ ख़राबियों हैं लेकिन उनके कुछ काम भी है। जैसे नमाज़ पढ़वाना या सुन्नतों पर अ़मल करवाना वग़ैरह–वग़ैरह। यह है आज कल के दुनियादार मौलवियों के अलफ़ाज़ जो इन से ख़ाति. र–ख़्वाह क़ीमतें वसूल कर के अपनी ज़बान को हक़ कहने से बंद किए हुए हैं और इल्तेबासे हक़ व बातिल पर राज़ी हैं। अल्लाह तआ़ला ऐसे मौलवियों से हम सब को महफ़ूज़ फ़रमाए। तो फिर इन मौलवियों के जवाब में यह कहूं गा कि, पहले तो यह बताएं कि इन दावतियों के अंदर से उन्हों ने खुद ही इन ख़राबियों को दूर क्यों नहीं किया? लेकिन शायद इन को यह मालूम है कि इस जमाअ़त का यह लाहिया अ़मल है कि पैसा दे कर, तंख़्वाहें दे कर मौलवियों से अपनी जमाअ़त की हिमायत कराओ। लेकिन अगर कोई मौलवी इन की ख़राबियां बयान करे इस पर ध्यान ना दो। बल्कि करना वही है। जिस का हुक्म इन का खुदसाख़्ता अमीर सादिर करे। जैसा कि कुछ उलमा पहले उनके साथ बज़ाहिर नारए मस्लके आ़ला हजअरत को देख कर हो गए थे। लेकिन जब उन्होंने अंदरूने ख़ाना इन की ग़लतियों और ख़ामियों को देख कर ऐतेराज़ात शुरू किए। तो फिर इन उलमा ही को इन मुबल्लिग़ीन ने आहिस्ता–आहिस्ता इस जमाअ़त से ही किनारे कर दिया या फिर उन पर ऐसे इलज़ामात आ़ईद किए गए, जिस से इस तंज़ीम से बदज़न और मुत्नफ़िर हो कर खुद–बखुद किनाराकश होगए। यह इस तंज़ीम की एक खुफ़िया पालीसी है कि किसी भी अ़लिम को इतना उभारती, इतना पॉवर ना दिया जाए कि वो इस जमाअ़त पर हावी हो बल्कि सारे पॉवर उन्हें अफ़राद को दिए जाएगे जो इस जमाअ़त के खुदसाख़त अमीर इलयास के क़रीबी एजंट हों।

आख़िर में क़ारेईन से गुज़ारिश है कि जो जमाअ़त और तंज़ीम आ़ला हज़रत के इश्क और आ़ला हज़रत के नामके मोनोग्राम का सहारा लेकर दिनरात आ़ला हज़रत आ़ला हज़रत कहते नहीं थकती थी इस तंज़ीम का दूसरा रूख़ ा यह है कि गुस्तख़ाने आ़ला हज़रत से मुहब्बत, दुश्मनने आ़ला हज़रत को अपने इज्तेमाआ़त में बुलाना और उनकी महाफ़िलै में शामिल होना, इन का शेवा बन गया और इश्क़े आ़ला हज़रत रजिअल्लाहो तआ़ला अन्हो का नारा दे कर अ़व्वाम को धोका देने वाली पाकिस्तानी तंज़ीम ने आख़िर क्यों उन लोगोंको अपने इज्लास में बुलाना या उनके जलसों में जाना या उन रिसाले निकालने और मदारिस चलाने वा. लं से इत्तेहाद करना, जिन्होंने अपनी सारी कोशिशें रज़ा और मस्लके रज़ा को डेमेज करने में लगा दीं। जिन के दिलों में दश्मनीए रज़ा की चिंगारी भड़क रही है, जिस के रद में कई किताबें मंज़रे आ़म पर आई और आ रही हैं और उनके रद का नतीजा यह हुआ कि वो फ़ितने भी बहुत हद तक दब गए औरالحمدللهमस्लके रज़ा के मानने वालों ने समझ लिया कि यह गुस्ताख़ाने आ़ला हज़रत व मस्लके आ़ला हज़रत से हसद व अ़नाद रख. ने वालों के रसाईल व मदारिस हैं। यह उलमाए अहले हक़ की उन कोशिशों का नतीजा है।

लेकिन इश्क़े रज़ा का नारा देकर क़ौम को धोका देने वाली पाकिस्तानी जमाअ़त के मुबल्लिग़ा. और उस के खुदसाख़्ता दावती अमीरने नातो उसके रदमें कोई किताबचा लिखा ना उसके टी.वी. चैनल पर उसकी कोई तरदीद सुननेमें आई। बल्कि बाग़याने मस्लकेआ़ला हज़रतसे इत्तेहाद व इत्तेफ़ाक़ और उनसे क़ुर्बत ज़रूर इख़्तेयार करके उनकी हिमायत और ताईद उनके रिसालों की अ़आनत और उन दुश्मनाने मस्लके रज़ा को बुला कर उनकी ख़ैर ख़्वाही व हाशिया बरदारी वग़ैरह ज़रूर देखने में आई और आज भारत में पाकिस. तानी तहरीक की यह तमामतर साज़िशें जारी हैं।

आंख से काजल साफ़ चुरा लें यां वो चोर बला के हैं
तेरी गठरी ताकी है और तूने नींद निकाली है

अपने मज़मून इस पते पर भेजे या मेल कारे
Monthly SUNNI AWAZ Hindi
Old bhandara Road,
Ganjakhet, Nagpur-440018.
mail@sunniawaz.com

मूशरिक कौन?

अज़ : मुहम्मद आक़िब खरबे क़ादरी शाफ़ई

अपने ख़ुदसाख़्ता शिर्क का भरम क़ायम रखने के लिए अशफ़ाक़ सनाबली ने अपने किता. बचे में मज़ीद यह आयतें भी पेश की हैं, तर्जुमा : ''बेशक वो जिन को तुम अल्लाह के सिवा पूजते हो, तुम्हारी तरह बंदे हैं, तो उन्हें पुकारो। फिर वो तुम्हें जवाब दें अगर तुम सच्चे हो। क्या उनके पांव हैं? जिन से चलें या उनके हाथ हैं? जिनसे गिरफ़्त करें या उनकी आंखें हैं? जिन से देखें या उनके कान हैं? जिनसे सुनें। तुम फ़रमाओ कि (ऐ काफ़िरो) अपने शरीकों को पुकारो और मुझ पर दाव चलो और मुझे मोहलत ना दो।'' (पा.९, अल–आराफ़, १९५)

ईमाम अबू जाफ़र इब्ने जरीर तिब्री रज़िअलाहो तआला अन्हो इसके तहत फ़रमाते हैं, तर्जुमा : ''इस आयत में अल्लाह तआला बुतों की पूजा करने वाले उन मुश्रिकीन से उन्हें ऐसी चीज़ की इबादत करने की वजह से तंबीह फ़रमाता है, जो उन्हें नफ़ा व ज़रर नहीं पहुंचा सकती यानी मूरतियां।'' तर्जुमा : ''यह तुम्हारी तरह बंदे हैं।'' की तफ़्सीर में फ़रमाते हैं, तर्जुमा : ''अल्लाह तआला फ़रमाता है कि, यह बुत तुम्हारे रब की मिलकियत है, जैसा कि तुम ख़ुद इसकी मिलकियत हो।'' (जामेअ अल–बयान फ़ी तावील अल–कुरआन–जि.१३,स.३२१,मतबूआः मोससता अर्रिसालत, बेरूत)

जैसा कि अल्लाह तआला ने इरशाद फरमाया, तर्जुमा : ''अल्लाह ही का है जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है।'' (अल–बक़रह–२८४)

ग़ौसे आज़म शैख़ अब्दुल क़ादिर जीलानी रज़िअल्लाहो तआला अन्हो व अरदाह अना अपनी तफ़्सीर बनामे ''तफ़्सीरे जीलानी'' के नाम से मशूर है, में फ़रमाते हैं, तर्जुमा : ''(यह तुम्हारी तरह बंदे हैं) यानी यह तुम्हारी तरह मख़लूक़ हैं, बल्कि तुम से भी गए गुज़रे हैं। इस लिए कि यह जमादात हैं, जिनमें कोई शऊर नहीं। तुम लोगों ने कैसे उन्हें अपना माबूद ठहरा लिया कि तुम अल्लाह की इबादत की तरह उनकी इबादत करते हो।'' (तफ़्सीरूल जीलानी, ज़ेरे आयते मज़कूरा–जि.२, स.१८०, मतबूआ : मरकज़ अल–जीलानी ललजूस अल–अलमियत, अस्तनबूल)

इस तफ़्सीर से यह बात भी वाज़ेह हो गई कि, तर्जुमा : ''यह तुम्हारी तरह बंदे हैं'' का इताक़े लग़वी (डिशनरी) ऐतेबार से मुजाज़न बुतों पर भी किया जा सकता है। जैसा कि आयत में हुआ है। लेहाज़ा इन अलफ़ाज़ को बुनियाद बना कर यह इसरार करना कि, यहां अम्बिया व औलिया ही मराद हैं। वहाबियों की कुरआन की तफ़्सीर के साथ साथ अरबी ज़बान से भी ला इल्मी का सुबूत है।

४) तर्जुमा : ''और अल्लाह के सिवा उसकी बंदगी ना कर, जो ना तेरा भला कर सके ना बुरा। फिर अगर ऐसा करे तो उस वक़्त तू ज़ालिमों में से होगा।'' (पा.११, सूरए यूनुस : १०६)

ला तदअ का लफ़्ज़ी मानी है ''ना पुक. ार''। यहां पर माबूद व ख़ुदा मान कर पुकारने से मना किया गया है। इसी लिए हम ने इस का तर्जुमा ''बंदगी ना कर'' किया है।

तफ़्सीरे बग़वी और जलालैन में है, तर्ज.

मा : "ना पुकार का मतलब है, ना पूज।" (ज़ेरे आयते मज़कूरा)

ईमामे इब्ने जरीर तिब्री रहमहुमुल्लाह इस आयत की तफ़्सीर में फ़रमाते हैं, तर्जुमा : "यहां मुराद बुत और झूटे माबूद हैं। अल्लाह फ़रमाता है, तुम इनकी इबादत ना करो, इन से नफ़ा की उम्मीद पर या ज़रर के ख़ौफ़ से। इस लिए कि यह ना नफ़ा पहुंचा सकते हैं ना नुक़्सान।" (जि.१५, स.२१८)

५) तर्जुमा : "और इस के सिवा जिन्हें तुम पूजते हो, खजूर की गुठली के छिलके तक के मालिक नहीं। तुम उन्हें पुकारो तो वो तुम्हारी पुकार ना सुनें और बिलफ़र्ज़ सुन भी लें तो तुम्हारी हाजत रवाई ना कर सकें और क़ियामत के दिन वो तुम्हारे शिर्क से मुंकिर होंगे और तुझे कोई ना बताएगा। उस बताने वाले की तरह।" (पा.२२, सूरए फ़ातिर–१३,१४)

इस आयतमें **وَالَّذِيْنَ تَدْعُوْنَ** की तफ़्सीर में ईमाने तिब्री अलैहिर्रहमा फ़रमाते हैं, तर्जुमा : "अल्लाह तआला फ़रमा रहा है, ऐ लोगो! तुम अलाह के सिवा जिन की इबादत करते हो, अल. लाह तआला बुतों और झूटे माबूदों को उसके साथ शरीक ठहराने वालों से ख़िताब फ़रमा रहा है।"

तफ़्सीरे बग़वी और जलालैन में है, तर्जुमा : "आयम में अल्लाह के सिवा से मुराद बुत हैं।" तफ़्सीर इब्ने कसीर में है, तर्जुमा : "अल्लाह के सिवा से मुराद वो बुत और मूरतियां हैं जो मुश्रिकीन की मुक़र्रब फ़रिश्तों के लिए गढ़ी हुई शक्लों पर थीं।"

६) तर्जुमा : "और अगर तुम उनसे पूछो, आस. मान और ज़मीन किस ने बनाए? तो ज़रूर कहेंगे, अल्लाह ने। तुम फ़रमाओ भला बताओ तो वो जिन्हें तुम अल्लाह के सिवा पूजते हो, अगर अल्लाह मुझे कोई तक्लीफ़ पहुंचाना चाहे तो क्या वो उसकी भेजी तक्लीफ़ टाल देंगे? या वो मुझ पर महरबानी फ़रमाना चाहे तो क्या वो उसकी महरबानी को रोक रखेंगे? तुम फ़रमाओ, अल्लाह मुझे बस है, भरोसे वाले उस पर भरोसा करें।" (पा.२४, सूरए ज़ुमर–३८)

ईमामे इब्ने जरीर रहमतुल्लाह तआला अलैह इस की तफ़्सीर में फ़रमाते हैं, तर्जुमा : "अल्लाह तआला अपने नबी ﷺ से फ़रमा रहा है, ऐ नबी! अगर आप बुतों को अल्लाह के बराबर समझने वाले उन मुश्रिकों से पूछें कि, आसमानों और ज़मीन को किस ने बनाया? तो ज़रूर कहेंगे कि, अल्लाह ने।"

"मिन दूनिल्लाह" की तफ़्सीर में फ़. रमाया, तर्जुमा : "अल्लाह के सिवा से मुराद बुत और झूटे माबूद हैं।"

इस आयत में अल्लाह तआला ने "मिन दूनिल्लाह (अल्लाह के सिवा)" को मुअन्नस की ज़मीरों और मुअन्नस के सेग़ों से ज़िक्र किया है। **هُنَّ كَشِفٰت** और **هُنَّ ممسِكٰتُ** वग़ैरह मुअन्नस के अलफ़ाज़ हैं। इस लिए कि मुश्रिकीने अ़रब अपने माबूदों को मुअन्नस गुमान करते थे। उन्होंने अपने बुतों के मुअन्नस नाम रखे हुए थे। मस्लन लात, मुनात, उज़्ज़ह वग़ैरह। अगरचे पिछली आयतों में किसी ख़ास ऐतेबार से मुज़क्कर के अलफ़ाज़ इस्तेमाल हुए, मगर इस आयत में ख़ासतौर पर झूटे ख़ुदाओं के इज्ज़ और बेबसी को साबित किया जा रहा है और बुतों का मुअन्नस होना उनके कमाले ज़ोअ़फ़ (कमज़ोरी) की तरफ़ इशारा है। इस लिए यहां ख़ुसूसियत के साथ मुअन्नस के अलफ़ाज़ लाए गए। ताकि इसके ज़रिए से उन झूटे ख़ुदाओं और उनके पुजारियों की ज़िल्लत हो और उनकी बेवक़अ़ती (बेइज़्ज़ती) ज़ाहिर हो। चुनांचे तफ़्सीरे बैज़वी में है, तर्जुमा : "अल्लाह तआ़ला ने झूटे ख़ुदाओं की इंतेहाई कमज़ोरी को जतलाने के लिए काशिफ़ात और ममसिकात (सीग़ए मुअन्नस के साथ) फ़. रमाया। इस बिना पर कि मुश्रिकीन उन्हें मुअन्नस

की सिफ़त से मुतस्सिफ़ (तआरूफ़) करते थे।''

अ़ल्लामा हाफ़िज़ुद्दीन अबुल बरकात नस्फ़ी रहमतुल्लाह तआ़ला अन्हो अपनी तफ़्सीर में इस आयत के तहत फ़रमाते हैं, तर्जुमा : ''मिन दनिल्लाह को मुअन्नस के अलफ़ाज़ से इस लिए ज़िक्र किया, क्योंकि वो मुअन्नस हैं और वो लात, उज़्ज़ह और मनात हैं और इसमें मुश्रिकीन और उनके माबूदों की हतक (बे वक़्अ़ती) को ज़ाहिर करना है।'' (मदारकुल तंज़ील)

मुहम्मद सैय्यद तनतावी मिस्री अपनी तफ़्सीर में लिखते हैं, तर्जुमा : ''अल्लाह ﷻ ने उन ख़्याली ख़ुदाओं की तहक़ीर के तौर पर उन्हें तानीस (मुअन्नस की अ़लामत) के साथ ज़िक्र फ़रमाया। इस लिए कि मुश्रिकीन उन्हें मुअन्नस नामों से पुकारते थे। मस्लन लात, उज़्ज़ह, मनात वग़ैरह।'' (अल–तफ़्सीर अल–वसीत)

क़ारईने किराम! मज़कूरा आयत में ''मिन दूनिल्लाह'' से अल्लाह के महबूब बंदे यानी अम्बियाए किराम और औलियाए किराम हरगिज़ मुराद नहीं हो सकते। जैसा कि वहाबियों ने दावा किया है। इस लिए कि अगर उन मुक़द्दस हस्तीयों को मुराद लिया जाए तो यह लाज़िम आएगा कि, अल्लाह तआ़ला ने इस आयत में उन प्यारों को मुअन्नस के अलफ़ाज़ से याद करके उनकी तौहीन और तहक़ीर फ़रमाई है और उनका मज़ाक़ उड़ाया है और ऐसा मानी कम अज़ कम कोई ईमान वाला तो हरगिज़ मुराद नहीं ले सकता। अलबत्ता वहाबियों से यह बईद नहीं जबकि इससे बड़ी बड़ी गुस्ताख़ियों का इरतेकाब करके उस पर डटे हुए हैं।

क़ारेईने किराम! ख़ुदारा इंसाफ़ करें। तमाम मुतक़द्देमीन व मुताख़रीन, मुफ़स्सेरीन ने इन जैसी तमाम आयतों में मुश्रिकीन का बुतों को ख़ुदा समझ कर पुकारना मुराद लिया है। हत्ताकि हाफ़िज़ अबुलफ़िदा इस्माईल इब्ने कसीर दमिश्की शफ़ई (मुतवफ़्फ़ी–७७४ हि.) जिन पर वहाबिया काफ़ी ऐतेमाद करते हैं, उनकी तफ़्सीर इब्ने कसीर मारकेट में मौजूद है। इसी तरह क़ाज़ी मुहम्मद बिन अ़ली शौकानी (मुतवफ़्फ़ी : १२५० हि.) की तफ़्सीर फ़तेह अल–क़दीर फ़ी इल्मुल तफ़्सीर भी अ़रब मुमालिक में बाआसानी दस्तियाब है। वहाबियों के उन मोअ़तेमद मुफ़स्सेरीन ने भी अपनी तफ़्सीरों में उन जैसी तमाम आयतों में मुश्रिकीन का बुतों को पुकारना ही मुराद लिया है। यहूद व नसारा क़ुरआन की लफ़्ज़ी तहरीफ़ (बदलना) तो ना कर सके, मगर अपने एजंटों के ज़रिए क़ुरआन की मानवी तहरीफ़ करने में किसी हद तक कामियाब नज़र आते हैं। ठीक यही रविश सहाबए किराम अलैहमुर्रिज़वान के ज़माने में ख़्वारिज की थी। जैसा कि बुख़ारी के हवाले से गुज़रा।

क़ुरआन मजीद की मज़कूरा आयतों और उन जैसी दूसरी आयतों में ''मिन दूनिल्लाह'' यानी अल्लह के सिवा, से अम्बिया व औलिया नहीं, बल्कि बुत मुराद हैं और उन्हें पुकारने वालों से हम सुन्नी नहीं बल्कि मुश्रिकीने अ़रब मुराद हैं और चूंकि उनका पुकारना अपने बुतों को ख़ुदा और इबादत का मुस्तहिक़ समझ कर था, इस लिए यह पुकारना इबादत और शिर्क है। इस पर अगरचे तमाम मुफ़स्सेरीन का इज्माअ़ व इत्तेफ़ाक़ है। मगर इसी के साथ ख़ुद क़ुरआने मजीद की दूसरी आयतों में भी यह दलील मौजूद है कि मज़कूरा आयात में ''मिन दूनिल्लाह'' से क़ब्र वाले औलिया हरगिज़ मुराद नहीं हो सकते। मिसल के तौर पर क़ुरआन की इस आयते करीमा में ग़ौर फ़रमाएं, तर्जुमा : ''और उन्हें बुरा भला ना कहो, जिनको वो अल्लाह के सिवा पुकारते हैं कि वो अल्लाह की शान में बे अदबी करेंगे, ज़्यादती और जहालत से।''(पा.७, अल–इनामः १०८)

हाफ़िज़ इब्ने कसीर इस आयत की तफ़्सीर में लिखते हैं, तर्जुमा : ''ईमाम अ़ब्दुर्रज़्ज़ाक़ ने मे.

अ़मर से उन्होंने क़तादा से रिवायत की कि, क़तादा ने फ़रमाया, मुसलमान कुफ़्फ़ार के बुतों की बुराई बयान करते, तो कुफ़्फ़ार भी अल्लाह को दुश्मनी और जहालत के सबब बुरा कहते।'' इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई ولاتسبوالذين الخ
अगर इस आयत में मिन दूनिल्लाह से नबियों और वलियों को और उनके पुकारने वालों से हम सुन्नियों को मुराद लिया जाए तो दो बड़ी ख़राबियां लाज़िम आएंगी।

१) सहाबए किराम नबियों और वलियों को बुरा भला कहते थे।

२) जब नबियों और वलियों की बुराई की जाती तो उनको पुकारने वाले उसके बदले में अल्लाह को बुरा भला कहते।

हालांकि सहाबए किराम अलैहिमुर्रिज़्वान से मुतअ़ल्लक़ कोई सोच भी नहीं सकता कि, वो किसी नबी या वली की अदना बे अदबी करने को सोचें भी और नजदी वहाबी फ़िरक़ा जो अपने आपको अहले तौहीद और अहले सुन्नत को काफ़िर व मुश्रिक क़रार देता है, नबीयों और वलीयों की शान में शदीद तौहीन करता रहता है। मगर इसके बदले में किसी जाहिल से जाहिल सुन्नी के दिल में यह वसवसा भी नहीं आता कि, वो वहाबियों की दुश्मनी में अल्लाह को गाली दे।

लेहाज़ा मानना पड़ेगा कि, मिनदूनिल्लाह से क़ब्र वाले बुज़ुर्ग नहीं, बल्कि बुत और उनको पुकारने वालों से कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन मुराद हैं इसी तरह अल्लाह तआ़ला इरशाद फ़रमाता है, तुर्जमा : ''और अल्लाह के सिवा तुम्हारा ना कोई वली यानी हिमायती है, ना मददगार।'' (अलबक़रा–१०७)

अगर यहां मिनदूनिल्लाह से अम्बिया और औलिया को मुराद लिया जाए तो कुरआन मजीद की इस आयत का इंकार लाज़िम आएगा। तर्जुमा : ''तुम्हारा वली नहीं मगर अल्लाह, उसका रसूल और ईमान वाले।''

इसी के साथ एक और दलील मुलाहज़ा फ़रमाएं। अल्लाह ﷻ ने फ़रमाया, तर्जुमा : ''बेशक तुम और तुम कुछ तुम अल्लाह के सिवा पूजते हो, सब जहन्नम का इंधन हैं। जिसमें तुम्हें जाना है।'' (पा. १७, सूरए अम्बिया–९८)

इस आयत में अगर अल्लाह के कलाम का मुख़ातिब मुश्रिकीन की बजाए नबियों और वलियों को पुकारने वाले सुन्नी मुसलमानों को माना जाए और मिनदूनिल्लाह से अम्बिया और औलिया को मुराद लिया जाए तो लाज़िम आएगा कि (मआ़ज़ल्लाह) सारे अम्बिया और औलिया जहन्नम का इंधन हैं। जबकि यह बदाहतन बातिल है। लेहाज़ा माना पड़ेगा कि, मिनदूनिल्लाह से क़ब्र में आराम फ़रमा, अल्लाह के महबूब बंदे नहीं। बल्कि बुत मुराद हैं। इसीलिए इस के फ़ौरन बाद अल्लाह तआ़ला ने इरशाद फ़रमाया, तर्जुमा : ''अगर यह ख़ुदा होते, जहन्नम में ना जाते और उन सब को उस में हमेशा रहना है।'' (पा.१७, सूरए अम्बिया, आ.९९)

मुश्रिकीने अ़रब और सुन्नियों के अ़क़ीदे का फ़र्क़ :

क़ारेईने किराम ! आपने देख लिया कि, अपनी ख़ुदसाख़्ता तौहीद के यह झूटे अ़लम बरदार किस तरह कुरआने करीम की मानवी तहरीफ़ के संगीन जुर्म के मुरत्तकब हैं। अब रहा यह सवाल कि, कुफ़्फ़ारे अ़रब भी बुतों से इसी अ़क़ीदे के साथ मदद मांगते थे, जिस अ़क़ीदे के साथ हम अहले सुन्नत अम्बिया व औलिया से मदद मांगते हैं। यानी ख़लिक़े हक़ीक़ी अल्लाह ही को मानते थे और बुतों में अ़ताई क़ूव्वत तस्लीम करते हुए उन्हें अल्लाह की बारगाह में वसीला और सिफ़ारशी बनाते थे।

सूलाह कूल्लीयत एक वबा

अज़ : मुहम्मद जिबरान रज़वी ज़ियाई

मज़हबे इस्लाम ऐसा फ़ित्री मज़हब है, जिसकी शान यह है कि हर जगह इस की बह.ारें रंग लाती नज़र आती हैं। दुनिया के दिगर मज़हिब और अहले मज़ाहिब में जो आज कल तरह तरह की सोच पैदा हो रही हैं, उसको ख़ुदाए तआ़ला ने दस्तूरे इस्लाम बना कर कुरआन मजीद में बहुत पहले ही ज़िक्र फ़रमा दिया है। इसी लिए सरकारे दो आ़लम ﷺ इरशाद फ़रमाते हैं, ''**इस्लाम हर जगह ग़ालिब होता है। इस की शान ही यह है कि वो हमेशा ग़ालिब रहता है।**'' इसी लिए दुनिया में नौपैद हज़ार मसाईल के पेशेनज़र इस मज़हब के क़वानीन व दस्तावेज़ात में टवीस्ट (Twist) नहीं आजा। आज भी इन्हीं उसूल व ज़वबित पर मसाईल का हल होता है और कमाल यह है कि हर मस्अ़ले की असल इसी कुरआन शरीफ़ तक जा कर रूक जाती है। क्योंकि यह वो किताब है, जिस में ख़ुदाए तआ़ला ने अज़ व जोद आ़लम ता क़याम, क़ियामत होने वाले हर चीज़ की निशानदही फ़रमादी है। ख़ुदाए तआ़ला फ़रमाता है,

وَلاَحَبَّةٍفِی ظُلُمَاتِوَلاَرَطبٍ وَلاَیَابِسٍ اِلَّافِی کِتَابٍ مُبِین(अल.–इंआ़म–५६) तो इस से पता चला कि इस्लाम की हक़्क़ानियत की दलील अ़लमे तग़ैय्युर और इस्तेक़ामत है। इस क़ाएदए कुल्लिया की जानारी के बाद भी अगर कोई आदमी अपनी कम इल्मी और हट धरमी से यह कह कर के, ''**यह क़वाईद उस ज़माने के लिए ख़ास थे, इस ज़माने में इस को कोई ज़रूरत नहीं।**'' तो वो गुमराह है।

الإسلام یعلو ولا یُعلیٰ के तहत अगर देखा जाए तो दुनिया की तारीख़ में कभी ऐसा नहीं देखा गया कि इस्लाम ने किसी ग़ैर से अपने उसूली मआ़मलात में मुसालेहत या कमपरमाइज़ (Compromise)किया हो। किसी इस्लाम कश मस्अ़ले को सराहा हो। या कहा हो कि, ''फ़लां का तरीक़ा इस्लमा के तरीक़े से अच्छा है। बल्कि हमेशा इस्लाम और बानिए इस्लाम ने इसकी मुख़लेफ़त ही की है।'' इस पर बेशुमार अहादीस वारिद हैं। आसारे बरआमद हुए हैं। इस्लाम की मोअ़तमद इस्फ़ार में ज़र्री अलफ़ाज़ में कुंदा किए गए हैं। लेकिन आज दुनिया में कुछ ऐसे भी ख़ाक बाज़ व ख़ानासाज़ हैं, ऐसे भी शख़्सियत साज़ी की आबा अलहूस हैं, जो यह नारा बुलंद करते जाते हैं कि, ''**उसूल टूटे तो टूटे, मगर इज़्ज़त ना टूटे।**'' इनके इस मिशन को देख कर हैरानी भी अंगुश्ते बदनदां है अऔर यह सोचने पर मजबूर है कि, भला यह कैसे मुम्किन है कि बुनियाद टूट जाए, मगर घर ना टूटे। दुनिया का भी अ़जब माहौल है, सोचते हैं कि, ''**सब को एक साथ एक सफ़ में खड़ा कर दे ंतो, हमारा जत्था बड़ा हो जाएगा'' और इस्टेजों, मजलिसों और प्रोग्रामों में यह कह देते हैं कि, ''सब बराबर हैं।**'' भला सब बराबर कैसे हो सकते हैं? गोया वो यह कहने की कोशिश कर रहे हैं कि, ''**ईमान तो ईमान है ही पर कुफ़्र भी ईमाम है, जन्नत भी जन्नत है**

और जहन्नम भी जन्नत है।'' सही कहा किसी ने, ''ख़ुदा जब दीन लेता है तो अक़्लें छीन लेता है।''

मोतबिर तारीख़ की किताबें और मरूयाते सरकारे दो आ़लम ﷺ का अगर बग़ौर मुताल्ला कि जाए तो, यह बात राज़ रौशन की तरह ज़ाहिर हो जाएगी कि, ''**जब अल्लाह तआ़ला ने सरकारे दो आ़लम ﷺ को ऐलाने नबूवत और बबांगे दहल तौहीद व रिसालत का पैग़ाम बुलंद करने का हुक्म फ़रमाया तो कुफ़्फ़ारे कुरैश, जो हक़ को जानते हुए भी कि यह नबी हैं, अपने तमर्रूद व हट धरमी पर रहे।**'' जनाब अबू तालिब के इशरतकदे में बशक्ल व फ़द आते हैं और बूतालिब के ज़रिए बारगाहे रिसालत में मुसालेहत का दस्त दराज़ करते हैं। अबू तालिब जब उन कुफ़्फ़ार का पैग़ाम ले कर बारगाहे रिसालत में हाज़िर होते हैं तो कहते हैं कि, ''ऐ मेरे भतीजे! अब मैं तुम्हारे लिए दफ़ाअ़ करते करते कमज़ोर हो गया हूं, नियत ज़ईफ़ हो गया हूं। वो लोग मेरे पास आए थे, ताकि मैं तुम्हें उनकी तरफ़ से मुसालेहत का पैग़ाम दे दूं। उनका कहना है कि, अगर तुम्हें माल व सरवत चाहिए तो वो तुम्हें देने के लिए तैय्यार हैं। अगर तुम उन लोगों की सरदारी चाहते हो तो वो तुम्हें अपना सरदार बनाने के लिए राज़ी हैं और अगर तुम चाहते हो कि इस अ़रबिस्तान की सब से ख़ूबसूरत औ़रत तुम्हारी बीवी बने तो, वो तुम्हें देने के लिए तैय्यार हैं। बस वो तुम से इतना चाहते हैं कि तुम अपने इस वहदानियत के दावे को छोड़ दो। तुम उनके अरबाब को बुरा भला कहना छोड़ दो।'' रसूले पाक ﷺ ने फ़रमाया था कि, ''ऐ चचा जान! अगर आप ज़ईफ़ हो गए हैं तो बैठ जाएं।'' फिर फ़रमाया, ''क़सम बख़ुदा चचा! अगर वो मेरे दाहिने हाथ पर सूरज रख दें और बाएं हाथ पर चाँद, इस शर्त पर कि मैं इस काम को छोड़ दूं, हत्ता कि अल्लाह इस को ज़ाहिर कर दे या मैं इस में हलाक हो जाऊं। तब भी मैं यह काम नहीं छोडूंगा। ''**अगर उसूले दीन में किसी भी तरीक़े से मुसालेहत जाईज़ होती तो सब से पहले मुसालेहत करने वाले हम सब के जाने ईम.ान ﷺ होते। तारीख़ की किताबों में एक और वाक़िया मंक़ूल होता है। तक़रीबन दस हिजरी का वाक़िया है कि, जब मुस्लिमा बिन हबीब (मु.स्लिमा कज़्ज़ाब), बारगाहे रसूल ﷺ में पाँच सौ लोगों का वफ़्द ले कर हाज़िर होता है, कहता है कि, ''ऐ मुहम्मद (ﷺ)! हम तुम्हारे दीन को कुबूल करने के लिए तैय्यार हैं, मगर एक ृार्त है, वो यह कि तुम अपनी जांनशीनी तुम्हारे बाद मुझे सौंप दो।**'' हमारा अ़क़ीदा है कि, रसूले अकरम ﷺ ग़ैब की ख़बर रखते थे। इसी तरह वो ग़ैब का मुशाहिदा भी फ़रमाते थे। सरकारे दो आ़लम ﷺ का मालूम था कि, मुस्लिमा का मुस्तक़बिल इस्लाम में क्या क्या गुल खिलाएगा। उस वक़्त सरकारे दो आ़लम ﷺ के दस्ते अक़दस में खजूर की टहनी होती है, जवाबन इरशाद फ़रमाते हैं कि, ''ऐ मुस्लिमा! तू ख़िलाफ़त की बात करता है? क़सम ख़ुदा की, अगर तू मेरे हाथ की यह टहनी भी पोछा होता, तो मैं तुझे यह टहनी तक ना देता।'' आज कुछ लोग ऐसे भी पैदा हो गए हैं, जिन का पांव नहीं बल्कि पूरा बदल ज़ुल्फ़े यार में फ़ंसा हुआ है। जब देखते हैं कि, बटेर हाथ नहीं आएगा, अंगूर हासिल करना उनके बस की बात नहीं। तो ज़ाग़ को इस्बाब तजाविज़े राह समझ कर या फिर मुराद को मुहाल समझ कर उसको ऐबदार बना कर अपनी उलझी हुई नैय्या को पार

लगाने की नाकाम कोशिश करते हैं और दलील पर दलील देते हैं और कुछ ऐसे शयातीन पैदा हो गए हैं, जो अमन का नाम निहाद झंडा ले कर हर चहारदांग यह शोर मचाते घूमते हैं कि, ''हमसब एक हैं और रसूले पाक ﷺ ने हमें अमन का पैग़ाम दिया, भाई चारगी का दर्स दिया। तो हम क्यों आपस में लड़ें।'' (हालांकि वो इस बात से ख़ूब वाक़िफ़ हैं कि, हमारी उन से दुश्मनी किसी ज़ाती रंजिश से नहीं बल्कि वो हमारे दिलों की जान, फ़ख़्र ज़मीन व ज़मान ﷺ की तौहीन करने की वजह से है) और وَمَا اَرسلنٰکَ اِلَّا رَحمَۃً لِلعَالَمِين को अपनी ढाल बना कर इस मौज़ू पर लच्छेदार तक़रीर का जो सिलसिला वो बनाते हैं, उसे सुन कर लोग यक़ीनन इस पर फ़रेफ़्ता हो जाते हैं और उस का गुन गाने लगते हैं। लेकिन पसे पर्दा वो अपनी सियासी गद्दी को मुस्तहकम करने की पुरज़ोर कोशिश कर रहे होते हैं। लेकिन क़सम उस ख़ुदा की, जो सारे जहां का मालिक है, वही अहकमुल हाकिमीन है। वो जिसे चाहे وَتُعِزُّ مَن تَشَاء का ताजे इफ़्तेख़ार पहना दे और जिसे चाहे وَتُذِلُّ مَن تَشَاء की तौक़ ज़ेबे गर्दन करदे।

यह वो रब ﷻ है, जिसने रसूले पाक ﷺ की अदना तौहीन करने वाले (अबू लहब) के रद में एक मुस्तक़िल सूरह नाज़िल फ़रमाया, यह वो रसूले पाक ﷺ हैं, जिन्होंने ज़ुलख़्वेसरा को क़त्ल करने का हुक्म फ़रमाया। उसकी ग़लती यह थी कि, उसने रसूले पाक ﷺ को **مَقطُوعُ النَسل** कहा था। फिर जान की अमान के लिए काबा का गि. लाफ़ को पकड़ कर रोना ुरू किया। मगर रसूले पाक ﷺ ने उसके क़त्ल का हुक्म फ़रमा कर यह साबित कर दिया कि, गुस्ताख़ाने नबी ﷺ को इस दुनिया में जीने को कोई हक़ नहीं। यह वो सहाबा किराम हैं, जिन में से हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़िअल्लाहो तआ़ल अन्हो ने अपने महमान, जो एक बद मज़हब था। उसकी ख़बासत ज़ाहिर होने पर उसके सामने से दस्तरख़्वान को उठा लेने का हुक्म फ़रमाया और रहती दुनिया तक के लिए यह दर्स दे दिया कि, ''गुस्ताख़े नबी ﷺ ़ाफ़क़्क़त ै(लउचंजील) का मुस्तहिक़ नहीं। यह ऐसी क़ौम है, जिन के साथ इंसानियत के तक़ाज़े का कोई ऐतेबार नहीं किया जा सकता।''

जो आज सुलह सुलह कहते घूर रहे हैं, ज़रा उनके वालदैन को गाली दे दी जाए तो वो आपे से बाहर हो जाएं और जिन के सदक़े में उन के वालदैन और वो ख़ुद पैदा हुए, बल्कि सारी काएनात, जिस ज़ाते बा बरकत के बाअ़स वजूद में आई है, उनको गाली देने वाले से मुहब्बत? नहीं! यह हरगिज़ एक सलीमुलज़ौक वलहवास की अ़क्ल गंवारा नहीं करो। अल्लाह ﷻ से दुआ है कि, अल्लाह ﷻ हमें सुलह कुल्लियत जैसी वबा से महफ़ूज़ रखे औश्र हमें अपने ईमामन पर इस्ते. क़ामत अ़ता फ़रमाए। (आमीन)

हदिसे पाक

हज़रते अबू मूसा अश्आरि से रिवायत हैंके आप ने हूज़ुर ﷺ को फरमाते सूनाकि अल्लाह ﷻने आदम अलेहिस्सलाम को एक मुट्ठी मिट्टी से पैदा किया जो तमाम रूऐ ज़मिन से लिगाइ थी लैहाज़ा आवलादे आदम कि (सिफत) के बक़दर पैदा हूइ इनमे सूख़ वा सफेद, काले और दरमियानि है (नीज़) इनमें सख़्त, नरम, बद ख़सलत और नेक ख़सलत हैं।